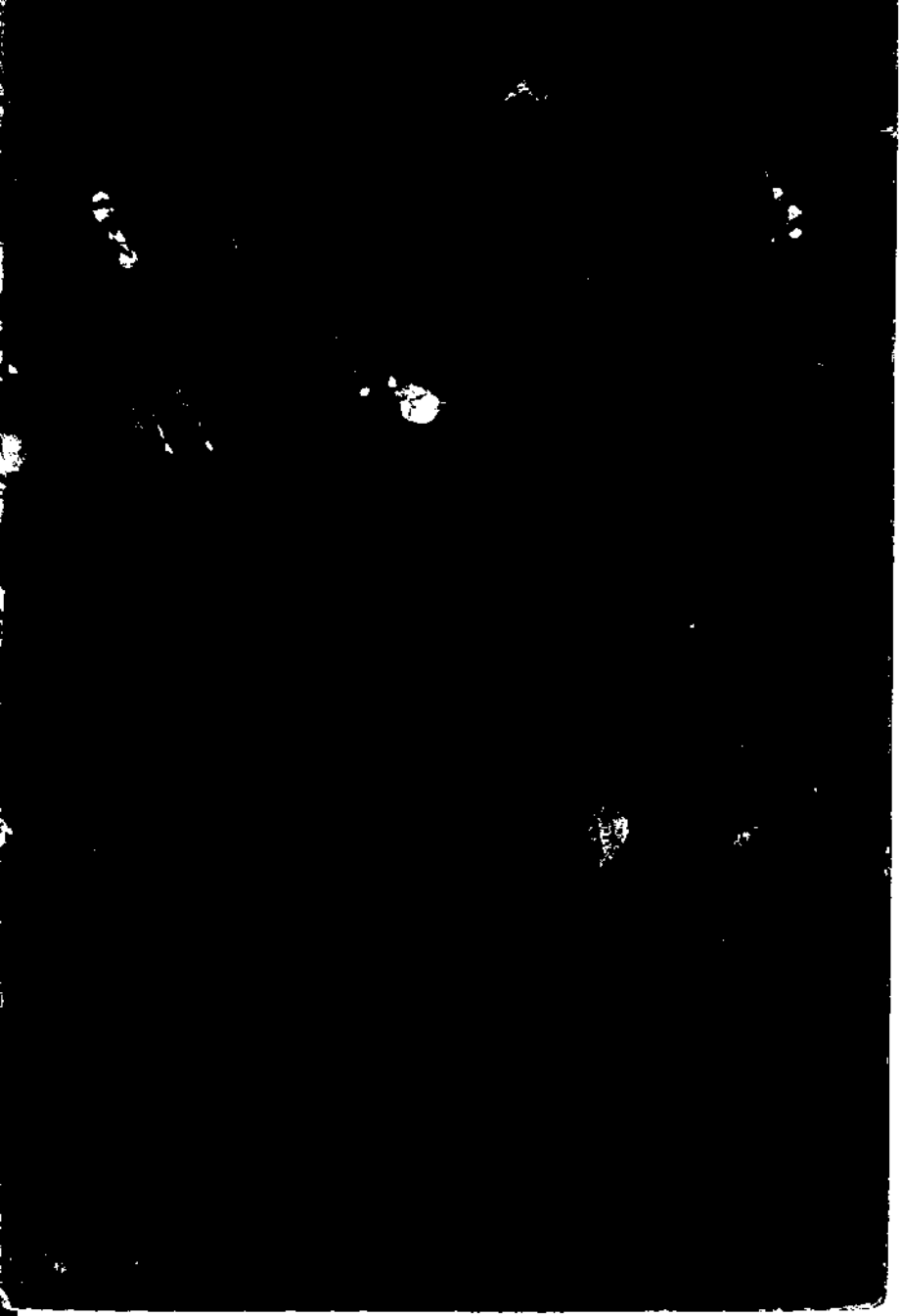

दो शब्द

'ऋतु रंजन'—केवल दो शब्द। जिस नगर पर न जाने कब से अंधविश्वास की रात छायी हुई है, लोग पराजित, विवश, केवल असम्भव की प्रतीक्षा में बैठे हैं, उस नगर में ऋतु का आगमन कितना शुभ और पवित्र है। ऋतु के आते ही जैसे रात बीत जाती है। और एक नया दिवसपक्ष शुरू होता है। ऐसा ऋतु सबको रंजन देने वाला है। ऋतु और रंजन दोनों समान-धर्मा हैं।

वस्तुतः ऐसा रंजनकारी ऋतु बारबार उस अन्धकार में प्रकट होता है, जो मनुष्य के मूल अस्तित्व के प्रति प्रश्नचिह्न लगाता है। और ऐसे ही ऋतु के फलस्वरूप मनुष्य अन्ततः अपराजित सिद्ध होता है।

ऋतुरंजन

पात्र

अवधूत
ऋतु
आरती
जाया
पुरोहित
नगर के लोग
पहला पुरुष
दूसरा पुरुष
तीसरा पुरुष
चौथा पुरुष
पहली स्त्री
दूसरी स्त्री
अधिकारी

तथा
दो उद्घोषक

पहला अंक

पहला दृश्य

स्थान : पुराण कथा की एक नगरी।
काल : कलयुग का तीसरा चरण।

[सारा दृश्य अन्धकार में डूबा हुआ है। बाहर मंच पर दो उद्घोषक आते हैं। दोनों एक स्वर में कहना शुरू करते हैं।]

दोनों : सुनो···सुनो···सुनो। कलियुग के तीसरे चरण में संसार की दशा ऐसी होगी।

[संगीत]

पहला : नगरों में स्वतन्त्रता के लिए विद्रोह होंगे और नगर स्वतन्त्र भी होंगे।

दूसरा : पर जिन्होंने स्वतन्त्रता संग्राम लड़ा होगा उन्हें मारकर समाधि, संग्रहालय और पत्थर की मूर्तियों में रख दिया गया होगा।

[संगीत]

पहला : प्रजातन्त्र के नाम पर तब आया होगा एक नया राजा, लोगों ने उसे चुना होगा।

दूसरा : या लोगों को वही चुनना पड़ा होगा; कौन जाने ? कौन सोचे ?

पहला : सोचने विचारने और फैसला करने का काम नगरवासी तब नहीं लेंगे।

दूसरा : समय, काल, जीवन सबकी गति धीरे-धीरे रहस्यमय हो जायेगी। समता, स्वतन्त्रता और ऐसे अन्य मूल्य सिद्धान्त रूप में स्वीकार कर नष्ट कर दिए जाएंगे।

पहला : विद्रोह, शंका, अनास्था को क्रमशः मर्यादा, संकल्प और शास्त्र में बदल दिया जायेगा।

दूसरा : लोग हारकर यह विश्वास करने लगेंगे कि उनका नगर भूत-प्रेतों से अभिशप्त है।

पहला : विश्वास नहीं, अपरिहार्य स्थिति। यह स्थिति एक ओर तन्त्र को दमन की शक्ति देगी, दूसरी ओर इस स्थिति की ओट में लोग अपने पाप

और अपराध को सबके सामने कह सकेंगे।

[संगीत]

दोनों : तब आयेगा नगर में एक अवधूत—हाँ, हाँ, इसी सांभल नगरी में, वह नगर में अपराधियों की संख्या गिनेगा, उन्हें मृत्युदण्ड दे उनकी आत्माओं को यहाँ बन्दी करेगा। और भूमिका रचेगा कलंकी अवतार की।

[उद्घोषकों पर से प्रकाश का जाना और चारों ओर जैसे असंख्य सुरों का संगीत बजना—दोनों काम एक साथ होते हैं। धीरे-धीरे दृश्य पर प्रकाश लौटता है। दायीं ओर ऊँची सीढ़ियों से ऊपर जैसे हड्डी का बना हुआ मन्दिर-द्वार है। बायीं ओर चबूतरा, चबूतरे के सामने और दायीं ओर दो-तीन धरातल, शेष खुला हुआ रास्ता। दायीं ओर से दो पुरुष तीसरे को बलपूर्वक लाते हैं। दृश्य में आते ही पहला धक्का मारकर तीसरे को गिरा देता है। दूसरा कृपाण निकालकर उसकी हत्या करने ही जा रहा होता है कि तीसरे की

निगाह उसपर पड़ जाती है। और दूसरा अपने-आपको छिपाने की कोशिश करता है।]

दूसरा : वह देख, अवधूत के मन्दिर का द्वार।

तीसरा : मैं तुम्हें ही क्यों न देखूं। (उठता है।) मुझे यहाँ क्यों ले आये ?

पहला : ताकि अपनी आँखों से तू अवधूत को देख ले।

तीसरा : मैं इस सांभल नगर का सबसे गरीब आदमी नहीं हूँ—यद्यपि गरीब हूँ·····।

पहला : तू हमारे राजा के खिलाफ बात करता है ?

दूसरा : जिसे पूरे नगर ने अपनी इच्छा से चुना है।

तीसरा : मैंने भी अपना मत दिया था। पर मेरी कोई इच्छा नहीं थी, क्योंकि मैं कुछ नहीं समझ पा रहा था···न तब, न अब तक।

पहला : तभी हम तुझे अवधूत के पास ले आये हैं। वह देख मन्दिर-द्वार। उसी के भीतर यहाँ की मृत संतानों की आत्माएं बन्दी हैं···।

तीसरा : बस···बस·····बस, अब और हमें

कितना डराओगे ? हमारे नये राजा ने कहा था—'हे सांभल के नागरिको। अब हम स्वतन्त्र हैं। तुमने हमें राजा चुना, इसके लिए हम तुम्हारे कृतज्ञ हैं। हम सेवा के लिये हर वक्त हाज़िर हैं।' सेवा !

[हँस पड़ता है।]

पहला : अरे ओ ! हम तुझे यहाँ हँसने के लिए नहीं ले आये हैं।

तीसरा : अच्छा।

[रोने लगता है।]

दूसरा : चुप रहता है कि नहीं।

पहला : तुझे किसी का डर है कि नहीं ?

तीसरा : हंसकर जवाब दूँ या रोकर ?

पहला : बंद कर बकवास।

तीसरा : मैं सबसे डरता हूँ—सबसे—अपने से भी। अब खुश ?

[दोनों अलग जाकर परस्पर बातें करते हैं।]

पहला : यह बड़ा बदमाश आदमी है।

दूसरा : वैसे डर तो गया है।

पहला : पर अभी यह भूतप्रेतों के चक्कर में नहीं आया है।

दूसरा : यद्यपि अकाल से इसका सारा परिवार मर चुका है।

पहला : इसे भी खत्म कर दिया जाये तो कैसा रहे।

दूसरा : नगर पुरोहित खुश होगा। हम राजा के और नज़दीक पहुँच जाएंगे।

पहला : इसमें हमारा कोई अपराध भी न होगा।

दूसरा : हाँ, हमारा क्या वश, जिसको चाहे प्रेत मार दे, और उसकी आत्मा अवधूत की सेवा में पहुँच जाय···।

[दोनों बहुत ही धीरे-धीरे गुप्त बातें करने लगते हैं।]

तीसरा : हैं। बोलते रहो—चाहे मुझे मार डालने की ही बात करते रहो, पर चुप मत हो, मुझे बहुत डर लगता है।

[सहसा बायीं ओर से वृद्ध का प्रवेश होता है।]

वृद्ध : (प्रवेश करते ही) कौन हो तुम लोग ?

भूत—भूत—प्रेत—

[लड़खड़ाकर भय से गिरकर बेहोश हो जाता है।]

पहला : हम लोग भूत-प्रेत जैसे लगते हैं क्या ?

दूसरा : बुड्ढा तो बेहोश हो गया।

[दोनों फिर अलग जाकर गुप्त बातें करने लगे हैं। तीसरा वृद्ध के पास जाकर प्रार्थना-स्वर में।]

तीसरा : भूत-प्रेतों से अभिशाप्त यह हमारी मातृभूमि, दुर्भिक्ष-अकाल में डूबी हुई यह हमारी नगरी, अवधूत ! अवधूत मन्दिर के बाहर आ।

[दोनों दौड़कर उस तीसरे का मुंह पकड़ लेते हैं।]

पहला : अवधूत को इस तरह पुकारेगा, तो वह हमें श्राप दे देगा।

दूसरा : अवधूत की ही शक्ति से नगर पर प्रेतात्माएँ छायी हैं।

तीसरा : सूर्यास्त हो गया। अवधूत आज

प्रकट नहीं हुआ।

[वृद्ध जागता है।]

वृद्ध : प्रेतात्माओ ! मुझे जाने दो। मैं तुम्हारे पैर पड़ता हूँ।

पहला : जाओ न।

दूसरा : अकेले कहाँ जा रहे हो ? देखते नहीं, सूरज डूब चुका है।

वृद्ध : ओह, तुम लोगों ने नहीं सुना क्या ?

तीनों : (एक साथ) क्या ?

[फिर पास आते हैं।]

वृद्ध : प्रेम-शान्ति के लिये बलिदान।

पहला : किसका ?

वृद्ध : मीथू जंगल में रहनेवाली महा-प्रेतिनी का।

दूसरा : किस्से मत बुझाओ।

तीसरा : मैं समझ गया। लगता है आरती को लोगों ने वश में कर लिया।

दूसरा : कौन आरती ?

वृद्ध : यह लो, यह आरती को नहीं जानता।—मैं चला, एक घंटा रात बीतते ही मीथू जंगल पर पूरनमासी का चाँद चमकेगा, उसी को देख-

कर आरती अपने शरीर में आग लगायेगी। नगर पर छायी हुई प्रेतात्मायें यहाँ से भागकर उसके जलते हुऐ जवान शरीर को घेर कर खड़ी हो जाएँगी। उसका जलता हुआ शरीर आगे-आगे चलेगा—जंगल से बाहर और उसके पीछे-पीछे सारी प्रेतात्माएँ यहाँ से निकल जाएँगी।

पहला : सब इसी अवधूत की महिमा है।

दूसरा : तो हमारा अकाल दूर हो जाएगा ?

पहला : जो भूत-प्रेत मीथू के सारे जंगल में छिपे हैं वे भी चले जायेंगे ?

वृद्ध : हाँ हाँ, वे भी।

तीसरा : जो प्रेतात्माएँ अवधूत के पास हैं वे भी ?

पहला : } (एकसाथ) चुप रह।

दूसरा : }

तीसरा : मैं जानना चाहता हूं।

पहला : आत्मायें अवधूत के वश में हैं।

तीसरा : नहीं, वे प्रेतात्माएं हैं। वही अवधूत के हाथ-पैर हैं।

तीनों : पकड़ लो—इसका मुंह बांध दो !

यह पागल हो गया।

तीसरा : उस हाथ पैर के मूल कौन हैं? राजा, पुरोहित—इसका भी मूल क्या है ? क्या है ?

[तीसरा यह कहता हुआ भागता फिरता है, दोनों ने उसे दौड़कर सीढ़ियों के ऊपर पकड़ लिया है। उसे नीचे खींचा जा रहा है।]

वृद्ध : इसे घसीटकर मीथू के जंगल में अभी डाल दो।

तीसरा : तू भी तो वही जंगल है।

पहला : यह ऐसे नहीं मानेगा।

[तीसरा सबको झटककर अभय खड़ा हो जाता है।]

तीसरा : खबरदार जो किसी ने मुझे छुआ। मैं प्रेत हूं। खा डालूंगा तुम सब को।

[तीनों की ओर वह झपटता है, तीनों भागते हैं। तीसरा हंस पड़ता है, फिर जैसे रो पड़ेगा।]

तीसरा : जिन्दा रह जाने के लिये प्रेत — प्रेत कहाँ से आते हैं ? बताओ अवधूत—बोलो—इस नगर को

स्वतन्त्र कराने वाले उन दो सरदारों में आरती के पिता पहले थे और दूसरे थे ऋतु के पिता। स्वतंत्र होते ही नये तंत्र के पहले शिकार वही दो हुए। ऋतु को अंक में छिपाये हुए उसकी मां इस नगर को ही छोड़ कर चली गयी। अकेली बची थी आरती। वह यहाँ अपने अस्तित्व के लिये लड़ती रही, और आज वह बीस बरसों की होकर सहसा महा-प्रेतिनी हो गयी।

[पृष्ठभूमि में शोर मचता है। आग लगी है।]

तीसरा : ओह ! मीथू के जंगल में आग लग गई।

[भागता है। दृश्य का प्रकाश बुझ जाता है, कुछ ही क्षणों में अब प्रकाश लौटता है, तब हम देखते हैं, पुरोहित चबूतरे पर खड़ा है। नीचे पहला, दूसरा पुरुष तथा वही वृद्ध भयभीत बैठे हैं।]

पहला : यह कैसा योग है ?

पुरोहित : हमारे शास्त्र में इसका योग बिलकुल

नहीं था।

दूसरा : आगे क्या होगा ?

वृद्ध : जो होगा।

पुरोहित : यह अकाल अभी रहेगा। नगर भी अभी भूत-प्रेतों से अभिशप्त रहेगा।

पहला : कब तक ?

पुरोहित : इसी नगरी में कलंकी अवतार होगा। उस दिन सारी मृत संतानों की बंदी आत्माएं मुक्त होंगी। नगर में फिर से आनन्द बरसेगा।

वृद्ध : पर यही नगर क्यों ?

पुरोहित : यह नगर सबसे प्राचीन है। इसकी एक महान सांस्कृतिक परम्परा रही है। ईश्वर के सारे अवतार यहीं हुए हैं।

पहला : हम क्या पूछ रहे थे ?

दूसरा : हां, हमारा प्रश्न क्या था ?

वृद्ध : मेरा क्या, मैं तो वृद्ध हूँ।

पुरोहित : भूत संतानों की आत्मा के साथ अवधूत इस समय साधनारत हैं।

पहला : मीथू के जंगल में लगी आग अब तक बुझा दी गयी होगी।

पुरोहित : कलंकी अवतार के लिये अवधूत को अभी उससे दूनी मृत संतानों की

आत्माएं चाहिए। जितनी की अब तक वहाँ उस अंधगह्वर में बंदी हैं।

दूसरा : उस युवक में कितना तेज था !

वृद्ध : काश ! तुमने तब देखा होता, इससे भी ज्यादा तेज उसके पिता में था। नगर संग्रहालय में उसकी विशाल मूर्ति रखी है। इस नगर की स्वतंत्रता की लड़ाई में राजा से उसने जो भयानक संघर्ष किया था—।

पुरोहित : चुप रहो। अवधूत की साधना में विघ्न हो रहा है।

पहला : उसका नाम कैसा है ?—ऋतु। उसने आरती को किस तरह उस आग से बचाकर उसी आग को जंगल में लगा दी।

पहला : शासन इस अपराध में उसे बंदी करेगा।

पुरोहित : (सहसा) हटो—भागो यहाँ से। मन्दिर द्वार से मधुमक्खियां निकल कर हमारी ओर आ रही हैं। अवधूत की साधना में विघ्न हो रहा है।

[सब भागकर एक ओर छिप जाते हैं।

पुरोहित एक ओर खड़ा रहता है। सामने से वही तीसरा पुरुष आता है, तेजी से चबूतरे की ओर बढ़ता हुआ।]

तीसरा : कहाँ हैं हमारे प्रश्न ?—कहाँ हैं हमारी शंकाएँ ? कहाँ हैं ?

पुरोहित : खबरदार, दूर हट जा यहाँ से।

तीसरा : नगर में आये हुए उस अतिथि ने बताया है कि हमारा विवेक यहीं कहीं गायब हो गया है।

पुरोहित : तू यहाँ से भागता है कि नहीं ?

[छिपे हुए तीनों प्रकट होते हैं। उन्हें देखते ही वह तीसरा भयभीत दूर हटता है।]

पुरोहित : वह अतिथि कहां है ?

तीसरा : मीथू जंगल में।

पुरोहित : वह महाप्रेतिनी कहाँ है ?

तीसरा : अब वह आरती है। ऋतु ने उसे देखते ही पुकारा 'अरु'···उस क्षण ऐसा लगा कि डरावने मीथू के जंगल में असंख्य पक्षीहों के बोल एक साथ गूँज उठे हों—'अरु'—'अरु'।

पुरोहित : मूर्ख। धीरे बोल। अवधूत साधना-

रत हैं।

तीसरा : मैं अवधूत से ही मिलने आया हूँ।

पहला : तेरी यह हिम्मत ?

दूसरा : तुझे भय नहीं लगता ?

वृद्ध : इसके कौन है आगे पीछे, जो इसे भय लगे। सब अकाल के मुँह में चले गये।

पुरोहित : नहीं, कलंकी अवतार की सेवा में लग गये।

तीसरा : मैं उनसे बात करने आया हूँ।

पहला : (साश्चर्य) क्या, तू मृत संतानों से बात करेगा ?

दूसरा : तुममें यह शक्ति है क्या ?

वृद्ध : तू बात करेगा ?

तीसरा : करूंगा—यह देखने के लिये कि उनकी आत्माएँ किस तरह अवधूत के हाथ बन्दी हैं।

वृद्ध : मृत संतानों से बात करने की शक्ति केवल उसी आरती में है।

पुरोहित : हाँ, वह महाप्रेतिनी।

तीसरा : उसका नाम अब आरती है।—वह आ रही है।

[पृष्ठभूमि में लोग 'मारो' 'मारो' का

शोर मचाते हैं, आरती भागी हुई आती है। उस पर पत्थर फेंके जा रहे हैं।]

[पहला, दूसरा तथा वृद्ध तीनों पुरोहित सहित, सभय एक ओर खड़े हो जाते हैं।]

आरती : अवधूत बाहर आ। मैं पिछले बीस वर्षों से जिस अतिथि की प्रतीक्षा कर रही थी वह नगर में आ गया। आ बाहर उसका रूप देख।

पुरोहित : अवधूत की साधना में विघ्न डालने का दण्ड जानती है ?

आरती : नहीं।

पुरोहित : फिर चुपचाप यहाँ से चली जा।

आरती : (दौड़कर सीढ़ियों पर चढ़ जाती है।) आओ—आओ—नगर के लोगो! मृत संतानों से बातें करने का समय आ गया। आओ—बंदी आत्माएँ इस अंधगह्वर से तुम्हें निहार रही हैं।

पुरोहित : अवधूत की साधना में विघ्न डालने वाली, तेरा अभी नाश होगा।

पहला : पर उसका कुछ नहीं हो रहा है।

दूसरा : वह निर्भय खड़ी है।

वृद्ध : मन्दिर द्वार पर वे असंख्य मक्खियाँ उड़ रही हैं, पर उसके पास नहीं आतीं।

पुरोहित : मक्खियों। बढ़ो—बढ़ो—और घेर लो इसे।

पहला : आरती'''नीचे उतर आ, मक्खियाँ बढ़ती आ रही हैं।

आरती : आओ—आओ—इन मक्खियों के चेहरे देखो—देखो।

[पुरोहित आवेश में बाहर जाता है। पहला, दूसरा, तीसरा और वृद्ध सब सीढ़ियों पर चढ़ जाते हैं।]

आरती : पहचानो।—पहचानो—मक्खियाँ अब चींटी बन गयीं। वह देखो। पहचानो उसे।

तीसरा : (पहचानता है।) यह मेरा पड़ोसी है। स्कूल में अध्यापक था। सबसे डरता था।

दूसरा : वह मेरा भाई है। हरी—हरी—दुनिया से कभी कोई मतलब नहीं रखता था। कहीं कुछ होता रहे, वह अपनी दुनिया में बन्द रहता था।

पहला : वह मेरे पिताजी हैं, पिताजी।—ओह, किसी पर भी कभी विश्वास नहीं करते थे।

वृद्ध : मेरे तीनों पुत्र—राम, श्याम और गोपाल—।

तीसरा : मेरे घर-परिवार के लोग कहाँ हैं?

[ये लोग अपने-अपने स्वजन को पुकार रहे हैं।]

आरती : नहीं, इनसे कोई संवाद नहीं हो सकता।

सब : ओह। सारी चीटियाँ आसमान में उड़ने लगीं। सब लुप्त हो रही हैं।

[उसी क्षण भीतर से मन्दिर-द्वार पर अवधूत का प्रवेश। शरीर पर लाल और काले वस्त्र। दाये हाथ में कपाल मंडित दण्ड। व्यक्तित्व से भयानक मन्त्रशक्ति फूट रही है। आरती के अतिरिक्त सभी नतसिर होते हैं। आरती उतरती हुई चबूतरे पर आती है।]

आरत : तुम्हें पता है, उस अतिथि का नाम ऋतु है।—ओह, तुम आज इतने

गंभीर हो। ऋतु से डर गये क्या? (हंसती है।) राजा, पुरोहित सब उससे डर गये हैं—ओह, तुम इस तरह चुप क्यों हो?—ऋतु, माँ के साथ नगर में आया है। सच, आज वह यदि यहां नहीं आता तो मैं मीथू जंगल में अब तक भस्म हो गई होती।—तुम बोलते क्यों नहीं अवधूत? हमारे प्रश्नों को अजगर बनकर तूने घूंट लिया है। हम प्रश्नहीन हैं। तुम्हीं कोई प्रश्न हमसे क्यों नहीं करते? ओह, तुम आज नहीं बोलोगे?—

[अवधूत भीतर मुड़ता है।]

आरती : अवधूत—रुको—रुको अवधूत।

[अवधूत चला गया है। सीढ़ियों पर छिपे हुए लोग धीरे-धीरे उठने लगते हैं।]

●

दूसरा दृश्य

स्थान : वही ।
समय : प्रातःकाल ।

[ऋतु और माँ का प्रवेश ।]

जाया : वह है अवधूत का मन्दिर ।

ऋतु : कितना डरावना है !

जाया : इस जन्मभूमि के अलावा, यहाँ कुछ भी पहचान में नहीं आता । सब कुछ बदल गया है । नगर के लोगों में अब वे पहले के लोग नहीं हैं । नहीं तो यह दुर्भिक्ष-अकाल यहाँ नहीं पड़ता । यह नगर प्रेतों से अभिशप्त न होता ।

ऋतु : पहले के लोग और आज के लोग, इन्हें अलग-अलग बाँटकर नहीं देखा जा सकता । भूत-प्रेत उन्हीं लोगों की रचना है, जिन्होंने देवता की कल्पना की है ।

जाया : नहीं नहीं ! सीढ़ियों पर मत चढ़ । यहाँ सब कुछ रहस्यमय है ।

ऋतु : ऐसा क्यों है ?

जाया : भला मैं क्या जानूँ ?

ऋतु : माँ, मुझे पता है, पर तू मुझे बताना नहीं चाहती ।

जाया : ऐसा होता तो तुझे संग लिये हुए यहाँ वापस क्यों आती ?

ऋतु : मैं पिछले कितने वर्षों से यहाँ आने के लिए तुझसे ज़िद करता था, और तू मुझे इस मातृभूमि की पुरानी कहानियाँ सुनाकर चुप कर देती थी ।

जाया : यहाँ के लोगों की पुरानी कहानियाँ (सभय चारों ओर देखती है ।) पर अब तक यहाँ मुझे एक भी ऐसा परिचित व्यक्ति नहीं मिला, जिससे मैं पूछती कि यहाँ यह क्या हो गया । मुझे लगने लगा है कि इस नगर की कहानियाँ कहीं झूठी तो नहीं पड़ गयीं ।

ऋतु : मैं अवधूत को पुकारता हूँ माँ ।

जाया : नहीं नहीं, ऊपर मत चढ़ । अव-

धूत को मत पुकार। वह तुझे श्राप दे देगा।

ऋतु : श्राप—श्राप क्या होता है ?

[ऋतु ऊपर चढ़ता है। माँ दौड़कर उसे नीचे खींचती है।]

जाया : नहीं नहीं, मैं तुझे यहाँ नहीं रहने दूँगी। यह नगरी अभिशप्त है।

ऋतु : इसकी जिम्मेदारी हम सब पर है।

जाया : नहीं, हम यहां नहीं थे।

ऋतु : क्यों नहीं थे ?

जाया : तूने देखा नहीं, नगर में इस तरह का अकाल पड़ा है, लोग इतनी संख्या में मर रहे हैं, पर लोग इस तरह चुप हैं या केवल शोर करते हैं।

ऋतु : ऐसा क्यों है ?

जाया : लोग जैसे किसी अज्ञान-मंत्र में बंधे हैं।

ऋतु : ऐसा क्यों है ?

[जाया उसे खींचकर बाहर ले जाना चाहती है।]

जाया : नहीं नहीं, यहाँ खड़े होकर प्रश्न मत

कर।

ऋतु : आश्चर्य है, इस नगर में आते ही तुझे क्या हो गया ? तू मेरे उस बलिदानी, वीर पिता की पत्नी है, जिसकी जयगाथा अब तक इस नगरी में अमर है।

जाया : नहीं—यह वह नगरी नहीं है।—भाग चल यहाँ से, नहीं तो कोई तुझे यहाँ जिन्दा नहीं रहने देगा।

ऋतु : मैं मरने से डरता हूँ क्या ?

जाया : नहीं, लड़ाई तो यहाँ होती ही नहीं। लोग जिन्दा रहते ही मर जाते हैं।

ऋतु : माँ।

जाया : भाग चल।

ऋतु : नहीं, मैं यहीं आने के लिये जीवित था। अकालग्रसित है तो क्या, यह मेरी मातृभूमि है। भूतप्रेतों से अभिशप्त है तो क्या, यह सारा वायुमण्डल मेरा है।

जाया : ऋतु।

[ऊपर मंदिर द्वारा पर अवधूत प्रकट होता है।]

जाया : तुम मेरे पुत्र को श्राप नहीं दोगे ?

अवधूत : तुम्हारा यह पुत्र मेरा विरोध नहीं करेगा।

ऋतु : तुम्हारा विरोध किया जा सकता है ?

अवधूत : इस असंभव के लिये प्रयत्न मत करना। यह नगर तुम्हारी मातृभूमि है, पर तुम इसे नहीं जानते। इन इतने वर्षों में यहाँ क्या-क्या हुआ है, तुम्हें क्या पता ? यहाँ अब संशय की रात नहीं घिरती। कोई अपने आप पर विश्वास नहीं करता। सब उसी कलंकी की प्रतीक्षा में हैं।

[अवधूत तेजी में भीतर मुड़ता है। चारों ओर से 'घेर लो', 'जाने न पाये', 'पकड़ लो', 'मारो मारो' का शोर उठता है। पीछे और बायीं ओर से नगर के लोग पुरोहित के संग आते हैं।]

सब : पकड़ लो। मारो—मारो।

जाया : किसको ? किसे ?

पहला : जिसने उस महाप्रेतिनी को जलने से बचाया।

दूसरा : नगर की प्रेतमुक्ति में जो बाधक बना।

चौथा : जो इस नगर की दशा की जिम्मेदारी हम पर डालने चला है।

पुरोहित : जो यहाँ अनास्था फैलाने आया है।

जाया : तुम में से कोई भी मुझे नहीं पहचानता ?

[सब चुप हैं।]

जाया : इस नगर को किसने स्वतंत्र किया था ?

पहला : अब हम इतिहास नहीं याद रखते।

ऋतु : यह नगर क्या है ?

दूसरा : हमें सब पता है।

ऋतु : इस नगर का शासक कौन है ?

[उसी क्षण पृष्ठभूमि में कोई बाजा बजाकर सूचना देता है।]

सूचना : सुनो—सुनो—सुनो—। एक अत्यन्त आवश्यक सूचना। कल ठीक दोपहर को, नगर की दशा पर मंदिर मैदान में असाधारण सभा होगी। उसमें नये राजा का भाषण होगा। आप सबकी उपस्थिति वहाँ परम आवश्यक है।

[बाजा बजाता हुआ,उसी घोषणा को दुहराता हुआ दूर चला जाता है।]

पुरोहित : इसे बंदीकर उसी सभा में उपस्थित करना होगा।—बढ़ो—पकड़ लो इसे। यह हमारे विधि-विधान को रोकने आया है।

[सब बढ़ते हैं। ऋतु और जाया उनके घेरे से निकल जाते हैं।]

पुरोहित : यह क्या किया ?

पहला : रोकने-लड़ने का अब हमारा अभ्यास नहीं रहा।

दूसरा : बिना क्रोध के कुछ नहीं होता।

चौथा : अब इस तरह हममें क्रोध नहीं पैदा होता।

वृद्ध : तुम्हारा कोई दोष नहीं; यह सब भूत-प्रेतों की माया है।

[सब जाने लगते हैं। अकेला पुरोहित खड़ा रह जाता है। वह आगे बढ़ता है।]

पुरोहित : महाशक्तिशाली अवधूत ! सुनो महाप्रतापी।

अवधूत : (प्रकट होता है।)

पुरोहित : ऋतु के आने से नगर प्रशासन चिंतित है।

अवधूत : आश्वस्त रहो। यह वर्तमान स्थिति उन स्थितियों को सहजही जन्म देती चलती है,जिससे यह स्थापित वर्तमान विजयी हो। ऋतु और आरती परस्पर प्रेम करना चाहेंगे; वह प्रेम जो यहाँ अभिशप्त है; कलंकित है।

पुरोहित : [प्रसन्न] ओह। हमारा सारा तंत्र चिंतित था कि ऋतु पर आपने बंदी आत्माओं को क्यों नहीं छोड़ा ? उसे श्राप देकर समाप्त क्यों नहीं कर दिया ?

[अवधूत भीतर लौटता है। पुरोहित प्रणाम कर बाहर जाता है।]

●

तीसरा दृश्य

स्थान : वही।
समय : रात।

[आरती चबूतरे पर लेटी है।]

आरती : द्वार बंद कर लो अवधूत। रात बहुत बीत गयी है। मृत संतानों की बंदी आत्माओं का शोर यहाँ तक फैल रहा है। बंद कर लो ताकि मुझे नींद आ जाय, और मैं स्वप्न देखूं कि वह अतिथि मेरे पास आया।—

(रुककर, जैसे कि वह अवधूत उसके सामने खड़ा है।) जाओ, बंद कर लो अपना मंदिर।

आरती : क्यों तुम्हें नींद नहीं आती क्या ?

आरती : कभी नहीं सोते ?

आरती : ओह। हर समय लोग मरते हैं, और उनकी आत्माएं तुम्हारे पास आती हैं !

आरती : अच्छा—अच्छा, जाओ मुझे सोने दो।

[सोने का प्रयत्न करती है। ऋतु आता है। पीछे दौड़ी हुई माँ आती है। ऋतु बढ़ता हुआ आरती के पास आ रहा था।]

जाया : नहीं, नहीं, नहीं। उसे कोई नहीं छू सकता। उसके शरीर पर भूत-प्रेत हैं। उसे छूने वाला तत्काल जलकर भस्म हो जाएगा।

ऋतु : कौन कहता है ?

जाया : सारा नगर इससे डरता है। यह मृत संतानों से बात करती है।

ऋतु : मैं इससे बात करना चाहता हूँ।

जाया : इससे दूर रहकर।

ऋतु : मैं इसे छूना चाहता हूँ।

जाया : नहीं, नहीं, नहीं।

[ऋतु बढ़कर आरती को बाहों से पकड़कर खड़ा कर देता है।]

जाया : उसे छोड़ दे। उसे मत देख।

ऋतु : देखो न माँ, कुछ तो नहीं हुआ।

[आरती जाया के पैरों पर गिरना चाहती है। जाया भागती है।]

आरती : देखो न माँ, मैं अब महाप्रेतिनी नहीं। तुम्हारे पुत्र के स्पर्श ने मुझे—।

जाया : ऋतु, तू कुछ नहीं समझता। यहाँ सब कुछ रहस्यमय है।

ऋतु : यहाँ आकर तू कितनी कठोर होगई।

जाया : जभी मैं कहती हूँ, तू यहाँ मत खड़ा रह।

आरती : ऋतु, मैं तुम्हें स्वप्नों में देखती रही हूँ।

जाया : तुझे कैसे मालूम इसका नाम ? यह तब केवल बारह दिन का था, जिस दिन इसके पिता का नगर जेल में स्वर्गवास हुआ था, उसी रात में इसे अंक में छिपाये हुए इस नगर से भागी थी।

आरती : उस समय मैं कहाँ थी ?

जाया : तेरा तब जन्म नहीं हुआ था।

आरती : मेरा जन्म आज हुआ है।

जाया : बन्द कर ये बातें।

आरती : मुझे अपनी माँ की याद नहीं है, शायद तब मैं केवल एक साल की थी। पिता जेल में थे, माँ तपेदिक से मरी थी।

ऋतु : मैंने अपने इस नगर की महान कहानियाँ सुनी हैं। मैं सदा यहीं के लोगों को स्वप्न में देखता था।

आरती : उस स्वप्न में में भी कभी दिखती थी ?

ऋतु : बार-बार—हर स्वप्न में तुम्हीं थीं।

जाया : ऋतु, तेरे माथे पर अवधूत का श्राप गिरना शुरू हो गया।

आरती : नहीं, ऐसा कभी नहीं होगा। (सीढ़ियों पर तेजी से दौड़ती है।) मैं अवधूत के मन्दिर में जाती हूँ।

जाया : (डर जाती है।) यह पागल लड़की मरेगी—अभी मरेगी—यह मौत के मुँह में जा रही है।

[अन्दर चली जाती है।]

ऋतु : आरती कितनी बहादुर है।

जाया : तुझे इसका नाम कैसे मालूम ?

ऋतु : हाँ, कैसे ?

जाया : हाय, मैं तुझे इस नगरी की कहानियाँ क्यों सुनाती रही ?

ऋतु : मेरी अच्छी माँ ?

जाया : पर वे कहानियाँ : परी-लोक की थीं।

ऋतु : वह परी-लोक मेरा यही यथार्थ देश था।

[आरती बाहर आती है।]

आरती : ऋतु इधर आओ।

जाया : (जाते हुए ऋतु को पकड़ लेती है) नहीं, तुम वहाँ नहीं जा सकते।

ऋतु : जाने दो माँ।

जाया : मैं इस लड़की के संग तुझे उस मायाबी के द्वार पर नहीं जाने दूँगी।

ऋतु : मुझमें तू भय जगाती है माँ।

जाया : तू कुछ नहीं समझता।

ऋतु : वही मैं समझना चाहता हूँ।

जाया : वह तेरी समझ के बाहर है ?

ऋतु : परी-लोक की कहानियों के पीछे छिपे हुए यथार्थ को मैं देखूँगा।

जाया : ऋतु !

[ऋतु ऊपर चढ़ता है। आगे-आगे आरती है। दोनों मन्दिर में घुसते हैं। क्षण भर बाद आरती की चीख सुनाई पड़ती है।]

जाया : मर गई पागल लड़की—मर गई। (कठोर भाव बदलता है।) मेरे ऋतु का कोई कुछ नहीं कर सकता। यहाँ मनुष्य के दोनों आदिम भाव, प्रेम और घृणा समाप्त हो गये हैं। प्रेम का स्थान ले लिया है वासना ने, घृणा की जगह भय छाया है। मैं इस रहस्य को उसे समझाऊंगी।

[मन्दिर द्वार से आरती को सम्भालते हुए ऋतु निकलता है। आरती को सीढ़ियों पर बैठाकर जाया के पास आता है।]

ऋतु : मन्दिर के भीतर इतने ही समय में, मैंने जो कुछ देखा, वह तुम्हारी बीस वर्षों तक कही जाने वाली कहानियों को एकदम झुठला देती है। आरती देखते ही चीखकर गिर पड़ी। अवधूत भीतर मृत संतानों की एक-एक लाश गिन रहा था। एक ओर शरीर, दूसरी ओर आत्मा। लाशों का इतना बड़ा अम्बार, जैसे भयानक ज्वार

में मरी हुई मछलियाँ, समुद्र तट पर छोड़ दी गई हों! इतनी दुर्गन्ध—इतनी दुर्गन्ध।

जाया : ओ पागल लड़की। तूने यही चाहा था न!

ऋतु : अब मैंने जाना, तू परी-लोक और अतीत की वे कहानियाँ मुझे क्यों सुनाती रही है? इस भयंकर वर्तमान से मुझे काट देने के लिये। अब समझा, इस नगर में मुझे क्यों नहीं ले आना चाहती थी; और यहां ले आकर भी मुझे वापस क्यों ले जाना चाहती थी, ताकि मैं यथार्थ न जान सकूं।

जाया : ठीक है, इस लड़की ने तुझे यथार्थ दिखाया। मैं तुझे कल्पना जगत में रखती थी, पर बिना कल्पना के यथार्थ का बोध होगा, यह मुझे आज मालूम हुआ।

[जाने लगती है।]

ऋतु : माँ, रुको—रुको माँ!

[जाया के पीछे-पीछे ऋतु चला जाता है। आरती उठती है। मन्दिर द्वार पर

जाती है। द्वार पीटती है।]

आरती : अवधूत!—अवधूत! स्मशान से बाहर निकल। अब सुबह होने को है। तुझे पता नहीं, तेरे मन्दिर में कौन आया था।

[द्वार को पीटती है। और तेज़ी से सीढ़ियों के नीचे जाती है। अवधूत प्रकट होता है।]

अवधूत : एक क्षण के लिए तुम अन्दर आयीं, और बेहोश ही गयीं। पर मेरा वही घर है।

आरती : वहीं से तू जन्मा भी है क्या?

अवधूत : शक्ति का जन्म और कैसे होगा?

आरती : तू ऐसा क्यों है?

अवधूत : क्योंकि हूँ।

आरती : इतने भयंकर।

[अवधूत और आरती परस्पर देखते हैं।]

●

दूसरा अंक

पहला दृश्य

स्थान : वही।

समय : अगले दिन का दोपहर।

[उद्घोषक पृष्ठभूमि में सभा होने की घोषणा कर रहा है, सभा में लोग साग्रह लाये जा रहे हैं।]

पुरोहित : अजीब बात है, इतनी महत्त्वपूर्ण सभा में कोई आता हीं नहीं, लोग अपने-आपमें इतने व्यस्त हैं।

तीसरा : यही तुम चाहते थे।

पुरोहित : इस हालत में इस नगर का और भी पतन होगा।

तीसरा : यही तुम्हारा उद्देश्य है।

[कुछ लोग आवेश में बढ़कर उस तीसरे को पकड़ बाहर कर आते हैं। एक अधिकारी आता है। पुरोहित से धीरे-धीरे कुछ बातें करता है।]

अधिकारी : एक आवश्यक सूचना। किन्हीं राजनयिक व्यस्तता से राजा यहां नहीं आ सकेंगे। उनका भाषण मुझे याद है। आप लोग ध्यान से सुनिये।

तीसरा : जरा ऊँचा बोलियेगा।

अधिकारी : हमारे पास दूरगामी यन्त्र है। तैयार है ?

एक आदमी : (खड़ा होकर) तैयार—।

[लोग परस्पर बातें करने लगते हैं।]

अधिकारी : शान्त।—शान्त।

एक आदमी : शान्त।—शान्त।

[कुछ लोग सहसा हँस पड़ते हैं।]

अधिकारी : भाइयो—

एक आदमी : इयो।

अधिकारी : हमारे देश में।

एक आदमी : —देश में—।

अधिकारी : बहुत प्राचीन काल से।

एक आदमी : काल से।

अधिकारी : अकाल पड़ता रहा है।

एक आदमी : अता रहा है।

[लोग क्रमशः हँसते-हँसते जैसे पागल

हो उठे हैं और एक आदमी को लोग हँसते-हँसते मार डालते हैं। अधिकारी और पुरोहित भागते हैं। वह तीसरा पुरुष सहसा चिल्लाता है।]

तीसरा : वह मर गया—। मर गया—मर गया।

[सब भागते हैं। तीसरा लाश के पास जाता है। सहसा चिल्ला उठता है।]

तीसरा : प्रेत—प्रेत—नहीं, नहीं मैंने तुझे नहीं मारा।

[सीढ़ियों पर चढ़ जाता है। नगर के एक-एक लोग बेहद डरे हुए आते हैं।]

पहला : मैंने तुझे नहीं मारा। मैं प्रेत के वश में आ गया था।

[सिर झुकाये एक ओर खड़ा हो जाता है। दूसरा आता है।]

दूसरा : मुझे होश भी नहीं था कि मैं क्या कर रहा हूँ। मैं अपने वश में नहीं था।

[खड़ा रह जाता है। चौथा आता है।]

चौथा : हम क्या करें। हम सब उन्हीं प्रेतों

के वश में हैं। हमारा अपना कोई कसूर नहीं।

[सब सिर झुकाये खड़े रहते हैं। ऊपर अवधूत प्रकट होता है।]

अवधूत : उस लाश को यहाँ रख जाओ।

[सभी भयभीत देखते हैं।]

अवधूत : जल्दी करो। उसकी आत्मा भीतर आ चुकी है।

पहला : हमें डर लगता है।

दूसरा : हम इसे नहीं छू सकते।

चौथा : हमारा कोई कसूर नहीं।

वृद्ध : यह हमसे नहीं हो सकता।

अवधूत : हटो। उठकर वह लाश स्वयं भीतर चली जाएगी।

[सब डरते हैं। वह लाश सचमुच उठकर ऊपर जाने लगती है। उस तीसरे के अलावा सभी भय से मानो जड़ हो जाते हैं।]

अवधूत : तुम सबको इसी तरह मेरे पास आना होगा। मेरी शक्ति से कोई नहीं बच सकता। सुन लो, न मेरा कोई मित्र है न शत्रु। मुझे

जो शक्ति मिली है, उसका उपयोग मुझे करना ही होगा।

तीसरा : यह असीम शक्ति तुम्हें कहाँ से मिली ?

अवधूत : तुम सबसे—इस पूरे नगर से।

वृद्ध : कैसे ?

अवधूत : जानना चाहते हो ? सुनो।

[तेज़ संगीत बजता है, फिर ऊपर मृत-संतानों की चीख-कोलाहल]

अवधूत : शक्ति घूमती रहती है—नीचे से ऊपर—और ऊपर—और ऊपर—राजा प्रतिनिधि, नया राजा, तन्त्र नया तन्त्र—मैं—मैं—मैं।

तीसरा : फिर वह शक्ति दूसरी ओर भी घूमती होगी।

अवधूत : पहले की चरमसीमा पर पहुँचकर अपने को पूरा समाप्त कर नियति के घोर अंधकार में डूब जाना, जहाँ से कोई प्रत्यावर्तन नहीं।—नहीं।—तुम में से अब कोई पीछे नहीं जा सकता।

[ऋतु आता है।]

अवधूत : तुम भी नहीं।

ऋतु : [देखता रह जाता है।]

अवधूत : मैं भी नहीं।—वह कलंकी भी नहीं। (रुककर) तुम सब मुझसे घृणा करते हो। मैं तुम्हें भय देता हूं। तुम मुझे घृणा देते हो। तुम मुझसे घृणा करते हो। पर हम परस्पर प्रेम करते हैं।

ऋतु : हत्यारा—स्वार्थी—निरंकुश।

अवधूत : मैं तुम सबमें से जन्मा हूँ और इस जन्म देने के भयंकर अपराध का दंड तुम सब को भोगना होगा।

●

दूसरा दृश्य

स्थान : मैदान।
समय : संध्या।

[ऋतु और नगर के लोग एकत्र हैं।]

ऋतु : (पहले से) हमारे नगर के नये राजा और अवधूत कब और कहाँ मिलते हैं।

पहला : (चुप है।)

ऋतु : पुरोहित अवधूत से कब और कहाँ मिलता है।—बोलो, अवधूत मंदिर से बाहर कब और कहाँ निकलता है?

पहला : मैं किसी का कोई गुप्तचर नहीं। बस, इस नगर का रहने वाला हूँ—केवल एक दर्शक।

ऋतु : नगर के इस पतन को तुम नहीं देखते?

पहला : देखता हूँ, पर मुझसे कोई मतलब नहीं।

ऋतु : ऐसे मत बोलो, इस भाषा से मुझे अपार कष्ट होता है।

पहला : तुम्हारी भाषा से हमें भी कष्ट होता है। तुम बाहर से इस नगर में आये हो। मैं इस नगर से बाहर आया हूँ।

ऋतु : बस—बस—बस।

[एक सन्नाटा खिंच जाता है।

दूसरा : जैसे उसे आते हुए मैंने देखा है।

[पहला और दूसरा एक संग हंस पड़ते हैं]

दूसरा : मैंने तो तुम्हें भी नगर में आते हुए नहीं देखा।

[फिर वही हँसी।]

ऋतु : भूख से मरते हुए लोगों को देखा है? डर से बेहोश होते हुए लोगों को देखा है? अंधविश्वास में तड़पते हुए लोगों को देखा है?

दूसरा : देखने के लिये केवल यही बचा है क्या? जाकर तुम देखो, बाहर से आये हो न। हम इसे क्या देखें—यह तो है ही—था ही।

ऋतु : यह नष्ट होता हुआ नगर, तुम्हारा

है, क्या तुम यह अनुभव नहीं करते?

दूसरा : क्या हम यही बातें करने यहाँ आये हैं ?

[वही हँसी। ऋतु चुप हो जाता है।]

तीसरा : मैंने देखा है अवधूत को। रात को मैं उसे प्रायः चारों ओर घूमता हुआ देखता हूँ। राजा, पुरोहित, सैनिक, नगर के अधिकारियों के साथ, बैठे, घूमते और बातें करते हुए।

वृद्ध : उसके चारों ओर मृत्यु की सेना घिरी रहती है। हम सब मरेंगे—।

पहला : मृत्यु—मृत्यु—मृत्यु—। हमें देखना यह है कि मृत्यु से बढ़कर यहाँ कोई अच्छी चीज़ भी है क्या ?

दूसरा : वह अवधूत की शक्ति है।

ऋतु : बस, बस, बस। मुझे अकेला छोड़ दो—या तुम सब मेरा गला घोंटकर मुझे यहीं फेंक दो।

[नगर के लोग उठकर बायीं ओर चले जाते हैं और खड़े होकर परस्पर बातें करते हैं। ऋतु वहीं अपनी जगह उदास मौन बैठा है।]

तीसरा : तुम लोग चाहते क्या हो ?

पहला : तुम लोग क्या चाहते हो ?

तीसरा : यह अकाल समाप्त हो। नगर प्रेत-मुक्त हो। और अवधूत यहाँ से चला जाये।

पहला : यह अकाल समाप्त हो, यह हम भी चाहते हैं। पर भूत-प्रेतों से तो हमारा जीवन है। इनकी ओट में हम स्वतन्त्र अनुभव करते हैं। इनके बहाने हम अपने पाप और अपराध स्वीकार करते हैं।

वृद्ध : पर यह अकाल और ये भूत-प्रेत—दोनों एक-दूसरे के कार्य-कारण हैं।

दूसरा : अच्छा—अच्छा। हम चाहते हैं कि यह नगर प्रेत मुक्त भी हो जाय, पर हम नगर से अवधूत को नहीं जाने देंगे। वह हमें आशा देता है, हमारे भविष्य के लिये एक मूल्य देता है। वह हमारे लिये इतनी भयानक साधना कर रहा है। वह हमारे नगर के हित का स्वप्न देखता है। वह महान है। और वह हमारे अस्तित्व के लिए है।

[ऋतु हँस पड़ता है। फिर बेहद गंभीरता से उठता है।]

ऋतु : इस नगर मे अपार शक्ति थी—यह कोई नयी बात नहीं है। उस शक्ति को इस नगर ने एक व्यक्ति में रख दिया, यह भी उतनी नयी बात नहीं है। पर उस शक्ति का यह निरंकुश, अमानवीय, भयंकर प्रयोग, यह इस नगर के लिये बिलकुल नयी बात है—यह अपूर्व घटना है।

पहला : हम वही 'नया' और 'अपूर्व' चाहते ही थे।

ऋतु : कैसा नया और अपूर्व ?

दूसरा : तुम्हारी भाषा हमारी समझ में नहीं आती। (पहले से) देखो न, यह कैसी अर्थहीन बात है—जब हम यह नहीं जानते कि 'वैसा' क्या है, तो इस 'ऐसा' और 'वैसा' की तुलना हम क्या करें।

[दोनों हंसते हैं।]

पहला : ऐसा और वैसा।

दूसरा : वैसा और ऐसा।

ऋतु : हम सबको मरना है। हम अपने-अपने समय से स्वयं मरेंगे। पर कोई एक हमें मार दे, शरीर और आत्मा को हमसे अलग-अलग कर दे, फिर उसे चींटी और मक्खी की तरह गिने; यह कितना आश्चर्य और अपमान जनक है।

पहला : मैं आश्चर्य के लिये अपमान की परवाह नहीं करता।

[अकेला हंसता है।]

ऋतु : हमारे इस अस्तित्व का कोई अर्थ नहीं, वह अर्थ हमें कलंकी देगा, इस लिए मरो और मरो, और उस कलंकी की प्रतीक्षा में मरो।

पहला : मरने का एक बहाना तो हमें अवधूत ने दिया—क्यों ?

[पहला और दूसरा हंसते हैं।]

ऋतु : तुम्हारा इस तरह हंसना, मेरी समझ में आता है, पर मनुष्य को लाश बनाकर उसकी संख्या का अंकगणित तैयार करना—यह नया दर्शन मेरी समझ में नहीं आता।

पहला : यह सब तुझे अवधूत समझा देगा।

दूसरा : हमारी सारी समस्याओं का हल वही कलंकी करेगा।

[ऋतु दौड़कर आवेश में उस दूसरे को पकड़ लेता है।]

ऋतु : (उसे दबोचता हुआ।) तंत्र को अपनी चेतना इस तरह गिरवी रख दी। तेरे लिये आस्था अब व्यक्तिगत विषय न रहकर राजतंत्र के प्रशासन में आ गया। उस राक्षस के हाथ अपनी चेतना सौंपने वाले मूर्ख कायर, पशु—।

[उसे गिरा देता है। वह फफककर रो पड़ता है।]

दूसरा : हम क्या करते। सबने हमें यही बताया कि हम अपराधी हैं।

ऋतु : तुमने प्रश्न किया ?

दूसरा : (चुप है।)

ऋतु : तुमने कभी शंका की ?

दूसरा : (चुप है।)

वृद्ध : हमारे पूर्वजों ने प्रश्न किया था। गरुड़ ने काकभुशुण्डि से पूछा था—

सबसे भयंकर पाप कौन है ?—यही शंका करना। युधिष्ठिर ने सर्प से यह शंका की थी—मृत्युकाल में मनुष्य अपना शरीर तो यहाँ त्याग देता है, फिर बिना देह के ही वह स्वर्ग नरक में कैसे जाता है, और अपने कर्मों के फल कैसे भोगता है ?

[सब मूर्तिवत चुप होकर शून्य में देखने लगते हैं।]

ऋतु : जिस दिन वह प्रश्न जन्मा, यह शंका की गयी, उसी दिन कलंकी ने जन्म ले लिया।

दूसरा : वह कब आयेगा ?

[दोनों बढ़कर ऋतु को पकड़ लेते हैं और 'कब आयेगा' 'कब आयेगा' कहते हुये उसे दबोचने लगते हैं। ऋतु भय से चिल्लाता है और सब जैसे जड़ हो जाते हैं।]

●

तीसरा दृश्य

स्थान : वही मैदान
समय : रात।

[ऋतु उदास बैठा है। जाया खड़ी है।]

जाया : इस तरह कब तक तुम यहाँ बैठे रहोगे ?

ऋतु : (चुप है।)

जाया : बेटे, रात अधिक हो रही है।—मुझे यहाँ बहुत भय लग रहा है।

ऋतु : तो यहाँ से भागकर तुम कहीं छिप क्यों नहीं जाती ? इस नगर में तुम्हें अपने आप से इतना मोह हो जायेगा, यहाँ तुम इतनी कायर और अंधविश्वासी हो जाओगी, यह कल्पना कौन कर सकता था ?

जाया : ऋतु—मेरे बेटे।

[रो पड़ती है।]

जाया : केवल अकाल। क्या यह नगर प्रेत-अभिशप्त नहीं है ?

ऋतु : केवल अकाल। केवल अकाल।

जाया : तू उल्टा सोचता है बेटे। यहाँ···।

ऋतु : (बीच ही में) ये बातें बन्द करो माँ, नहीं तो मैं पागल हो जाऊँगा और मुझे भी उन्हीं मृत संतानों की गिरोह में जाना होगा। मैं भी उसी झूठे कलंकी की प्रतीक्षा करने लगूँगा।

[इस बीच आरती आकर वहाँ खड़ी हो गयी है।]

ऋतु : अरु। माँ को कहीं सुरक्षित स्थान पर पहुँचा आओ।

जाया : मैं तुम दोनों को इस तरह अकेले नहीं छोड़ सकती। मैं तुम्हें अवधूत के श्राप का अंग नहीं बनने दूँगी।

ऋतु : अवधूत·····।

आरती : मेरे ऋतुरंजन, हम दोनों के बीच वही अवधूत खड़ा है। मैं जिन शब्दों में तुमसे बात करना चाहती हूँ, तुम तक पहुँचते ही वे अर्थहीन हो जाते हैं।

जाया : बन्द कर अपनी ये निरर्थक बातें।

आरती : निरर्थक।···केवल यही सार्थक था इस नगर में। नगर की अजन्मी सतानें इसी सार्थक की प्रतीक्षा कर रही हैं—ताकि वे यहाँ जन्म ले सकें। (रुककर ऋतु के पास जाकर) इसी क्षण के लिये मैं इस नगर में जीवित रहकर तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही थी।

जाया : (ऋतु को खींच लेती है।) खबरदार। यह धरती श्रापित है। यहाँ के सारे अर्थ उल्टे हैं।

आरती : हम इस धरती को फिर से पवित्र करेंगे। इसी धरती ने हम दो निर्वासितों को फिर से मिलाया है।

जाया : नहीं नहीं, मैं अपने ऋतु को तुझे नहीं दूंगी।

ऋतु : (छुड़ाता है।) माँ, तुझे क्या हो गया है। तू कभी ऐसी नहीं थी। तुममें कितनी ममता थी। तू कितनी बड़ी थी।

जाया : जाकर इसका रहस्य उसी अवधूत से पूछ।

ऋतु : अवधूत।

[जाया रो पड़ती है। एक सन्नाटा खिंच जाता है।]

ऋतु : लगता है, मुझे भी भूत-प्रेतों में विश्वास हो जाएगा। नगर को मृत संतानों से मैं घिर जाऊँगा। मेरे प्रश्न—मेरे संशय—मुझसे अजनबी हो जायेंगे—और वे अन्त में पिशाच बनकर मुझे विषदंश करेंगे।

आरती : बन्द करो ये बातें।

ऋतु : लोगों का कहना है कि इस नगर में केवल तुम्हीं हो जो मृत संतानों की आत्माओं से बातें करती हो?

आरती : वे संतानें मृत कहाँ हैं? वे केवल अवधूत से बंदी हैं।

ऋतु : जो बंदी हैं, वही तो मृत हैं (सहसा) अवधूत उन बंदी आत्माओं को मक्खी चींटी बनाकर अपनी शक्ति दिखाता है—यह क्या है?

आरती : जिसका जो विश्वास है, वह वही देखता है।

ऋतु : (आवेश में आता है।) इस अंध-विश्वास में तूने भी योग दिया है।

तू महाप्रेतिनी बनकर मीथू के जंगल में जो स्वांग रच रही थी—।

आरती : तुम्हारी प्रतीक्षा में जीवित रहने के लिये मुझे वह करना पड़ा था।

ऋतु : वह इतना आवश्यक था ?

जाया : नहीं—नहीं—मैं तेरे मुँह से यह नहीं सुन सकती।—नहीं—सुन सकती—।

[बाहर भागती है।]

आरती : जब जाया जैसी माँ इस नगर में आकर ऐसे विश्वासों में बंदिनी हो सकती हैं, फिर यहाँ के लोग, जो युगों से अशिक्षित और अपमानित रहे हैं, उन्हें कोई क्या करता ?

[एक अजब सन्नाटा खिंच जाता है।]

ऋतु : (आरती को छूता हुआ।) अरु—माँ हमारे बीच से चली गई।

आरती : पर हमारे बीच वही अवधूत खड़ा है।

ऋतु : मैं उसे तोड़ डालूंगा।

आरती : (उसे देखती है।) मैं महाप्रेतिनी हूँ,

मुझे इस तरह छुओगे तो जल जाओगे।

ऋतु : मैं तुममें भस्म होकर इस पृथ्वी पर बिखर जाना चाहती हूँ।

आरती : तुम मेरे अर्थ हो।

ऋतु : मेरी अस्मिता।

[दोनों परस्पर अपलक देखते हैं। पृष्ठ-भूमि में अजन्मे संतानों का शोर उठता है।]

ऋतु : यह कैसा शोर है ? —लगता है, अवधूत ने हम पर बंदी आत्माओं को छोड़ा है।

[आरती हँसती है।]

ऋतु : अरु।

आरती : यह शोर मृत संतानों का नहीं, उन अजन्मी संतानों का है, जो हमारे प्रणय से इस नगर में जन्म लेना चाहती हैं।

ऋतु : वे जन्म नहीं ले सकतीं !

आरती : नहीं। (ऊपर देखती है।) देखो इस नगर के आकाश से वे संतान हमें अपलक निहार रही हैं।

ऋतु : आओ हम मूक शब्दों में बातें करें, नहीं तो उन अजन्मी आत्माओं का अपमान होगा।

[दोनों मूक परस्पर जैसे बात कर रहे हैं।]

●

चौथा दृश्य

स्थान : अवधूत का मन्दिर।

समय : प्रातःकाल।

[पुरोहित, दो स्त्रियां तथा नगर के लोग उपस्थित हैं। आरती ऋतु और जाया चबूतरे पर खड़े हैं।]

पुरोहित : कौन है वह, जिसने अवधूत को रात रोते हुए देखा था ?

पहली स्त्री : मैं हूँ ···

पुरोहित : झूठ है यह, तू फिर अब तक जिन्दा कैसे है ?

पहली स्त्री : जैसे इतने भयंकर अकाल में जीवित हूँ, परिवार के लोगों को मरते हुए देखकर जैसे जीवित हूँ—जैसे—।

पहला : बस—बस—बस, अकाल, प्रेत और मृत्यु ये सब अब हमारे लिये अप्रासंगिक हैं।

दूसरा : अवधूत अब प्रकट होगा। आज वह हमसे पूछेगा। हम सब उसे

उत्तर देंगे। वह कहेगा, हम अपना स्वीकार करेंगे।

दूसरी स्त्री : अवधूत देवता है। हमारे जीवन के लिए वह आश्चर्य है।

[अवधूत ऊपर प्रकट होता है। पहला, दूसरा, जाया, दोनों स्त्रियाँ, पुरोहित आदि नतसिर प्रणाम करते हैं। ऋतु, आरती, तीसरा और वृद्ध खड़े रहते हैं।]

अवधूत : पहले वे आगे आयें, जो मेरी महा-साधना को खंडित करना चाहते हैं। वे, जो मेरी महायोजना के विरोधी हैं।

ऋतु : हम यहाँ खड़े हैं।

अवधूत : चलो, पहले तुम्हीं स्वीकार करो—तुमने अब तक क्या किया है—बताओ, तुम्हें स्वीकार करना ही होगा।

ऋतु : (धीरे-धीरे उसके हाथ उठने लगते हैं।)

बचपन में माँ से इस नगर की महान कहानियाँ सुनी, पढ़ने गया तो वहाँ प्रश्न भी औरों के ही किये हुए थे, और उनके उत्तर भी पहले

से दिये हुए थे। फिर भी मैं कुछ महान करना चाहता था, पर उधर मैं उतना ही छोटा होता चला जा रहा था।

जाया : बस—बस—बस। ऋतु, तू यह कैसी भाषा बोल रहा है।

अवधूत : तुम इसकी माँ हो।—चलो तुम स्वीकार करो।—चलो जल्दी करो।

जाया : (हाथ उठाती हुई।) जब मेरे पति इस नगर की आज़ादी की लड़ाई में भयंकर कारावास काट रहे थे, मुझे इस नगर की महान कहानियाँ झूठी लग रहीं थीं—।

ऋतु : माँ। नहीं—नहीं।

[जाया को रोक देता है।]

ऋतु : अवधूत, बंद करो इस दृश्य को।

अवधूत : अब कोई पीछे नहीं लौट सकता। तुम्हें आत्मसाक्षात्कार करना ही होगा।—अब तुम स्वीकार करो।

आरती : मेरा सच भयंकर है। सुनो—सुनो।

[नगर के लोग 'नहीं' 'नहीं' की आवाज उठाकर आरती को रोक देते हैं।]

अवधूत : अच्छा तुम बोलो।

पहला : मुझे पतन और विनाश में सुख मिलता है।

[कुछ लोग छीः-छीः करके उसे रोक देते हैं।]

तीसरा : मैं बचपन से ही कोई बड़ा निर्णय लेना चाहता था, और एक दिन जब मैंने यह देखा कि हमारा निर्णय कोई और ले लेता है, उस दिन से मैं केवल बात—केवल—केवल बात—बात—बात—बात।

['चुप हो जाओ' का शोर उठता है।)

वृद्ध : मैं यह झूठ बोलकर वृद्ध हो गया कि अब कोई बड़ी घटना घटेगी।

[सहसा पुरोहित भागता है। लोग 'पकड़ो' 'पकड़ो' कहकर दौड़ते हैं। उसे वापस लाते हैं।]

अवधूत : (जैसे सबको अपनी ओर खींच रहा है।) आओ, आओ बढ़ो—तुम सब अपराधी हो। गवाह, न्यायाधीश, प्रत्याशी, दर्शक सब एकसाथ। आओ— और आगे बढ़ो।

[सब धीरे-धीरे आगे बढ़ते हैं।]

ऋतु : (सहसा) नहीं।

अवधूत : आओ तुम सबको मृत संतानों से मिलाऊँगा।

आरती : नहीं, नहीं।

अवधूत : पुरोहित, तुम मेरे पास आओ। तुम भी मेरे पास आने में डरते हो।

पुरोहित : जो आज्ञा।

[ऊपर जाता है।]

अवधूत : इन सबकी आँखों में तुम ध्यान से देखो।

पुरोहित : देखता हूँ।

अवधूत : पास आओ—और पास—और नज़दीक—। बढ़ो, इस महान की ओर—।

ऋतु : (वृद्ध को पकड़ता है।) रुको—रुको।

आरती : (जाया को पकड़ती है।) नहीं नहीं, आगे मत बढ़ो, यह भयानक है।

अवधूत : और पास—और पास—।

पुरोहित : (सहसा चीखकर अपनी आँखें बंद कर लेता है।) नहीं नहीं—नहीं।

[सीढ़ियों पर गिर जाता है।]

अवधूत : मेरे पास आओ।

[सब अब स्थिर हो गये हैं।]

अवधूत : तुम सबको मेरे पास आना होगा। तुम अपने-अपने अधिकार मुझे सौंप देने के लिये स्वतंत्र थे।

ऋतु : तू हममें अपराध बोध जगाकर हमारे विरोध को खत्म करना चाहता है। पर ये मनुष्य कल जायँगे।

अवधूत : कल ये दूसरे अकाल की रचना करेंगे।

आरती : अभागा, निर्मम—नारकीय, तू हर क्षण मौत में रहता है, तू मनुष्य को नहीं जानता।

अवधूत : मैं मृत संतानों के बीच संतुष्ट हूँ। वे चुप रहते हैं।

[तेजी से अंदर जाता है। सन्नाटा खिंचा हुआ है। धीरे-धीरे पुरोहित उठता है।]

पुरोहित : तुम सब मुझे इस तरह घूर-घूर कर क्यों देख रहे हो? तुम सब कौन हो? मुझे इस तरह मत देखो। अवधूत इस नगर से चला गया क्या? (दौड़ता है। मंदिर के दरवाजे से देखता है।) अवधूत है।—(सीढ़ियों से उतरता हुआ) अवधूत है—

●

तीसरा अंक

पहला दृश्य

स्थान : वही मैदान

समय : दोपहर का समय।

[आरती ऋतु को पुकारती हुई आती है।]

आरती : (ढूँढ़ती हुई।) ऋतु।—ऋतु।

[पहली औरत दिखती है।]

आरती : कौन?—कौन हो तुम?

पहली औरत : (आती है।) ओह महाप्रेतिनी (डर जाती है।)

आरती : मैं वह महाप्रेतिनी नहीं हूँ। देखो—मुझे छूकर देखो—। मुझे छूने दो।—

पहली औरत : (डरती है।) दया करो—दया करो मां। दया करो। (रो पड़ती है।) प्रसन्न हो तुम—तुम्हारे लिये मैं एक जीव की बलि देकर आ रही हूं।

आरती : मेरे लिये?

पहली औरत : (भीख मांगती है।) तुम शक्तिमान हो। तुम चाहो तो एक क्षण में नगर के भूत-प्रेत यहाँ से भाग जाएँ।

आरती : मैं शक्तिमान हूँ—मैं चाहूँ—।

[दूसरी औरत भी आती है।]

दूसरी औरत : हम तुम्हारी शरण हैं। इस नगर को बचा लो। मेरे घर के सब लोग मर गये, केवल मेरे दो बच्चे जीवित हैं, वे भी कल से बीमार पड़े हैं।

आरती : मैं महाप्रेतनी नहीं, तुम्हारे नगर की कन्या हूँ। देखो, मुझे छुओ—तुम जलोगी नहीं—।

दूसरी औरत : नहीं नहीं। दया करो मां—दया करो।

[आरती दौड़कर दूसरी औरत को पकड़ लेती है।]

आरती : देखो तुम जली नहीं। तुम्हारा कुछ भी नहीं हुआ।

दूसरी औरत : [गिड़गिड़ाती हुई।] यह तुम्हारी महिमा है।

पहली औरत : महान दया है।

दूसरी औरत : तुम्हारी करुणा है, माया है।

[आरती औरत को छोड़कर हट जाती है।]

आरती : जाओ—चली जाओ यहाँ से। चली जाओ—।

[आरती रो पड़ती है और टूटकर वहीं बैठ जाती है।]

[औरतें भागती हैं। ऋतु पुकारता हुआ आता है।]

ऋतु : अरु। अरु।—यह क्या हो गया?

आरती : (चुप है।)

ऋतु : नगर में, एक अजीब दृश्य उपस्थित है। पुरोहित की लड़की, घर की खिड़क से कूदकर आकाश में उड़ना चाहती है। वह कहती है, मैं पक्षी हूँ।—मुझे उड़ जाने दो। पुरोहित वहीं खिड़की के नीचे खड़ा चिल्ला रहा था। मुझे देर हो गयी।

आरती : (चुप है।)

ऋतु : मुझे लगता है, ये भूत-प्रेत सच हैं।

आरती : (उठती है।) फिर तो मैं महाप्रेतनी हूँ। यह सच है।

ऋतु : अरु। अरु।

आरती : जब विवेक इतना पराजित हो जाय, तो वहां उस विवेक की वेदी पर जलकर भस्म ही होना पड़ेगा।

ऋतु : अरु।

आरती : इस नगर का अँधेरा तुम्हें निगल न ले जाय, मैं अपने को भस्म कर प्रकाश की एक लौ जलाऊंगी।

ऋतु : अरु, तुम होश में हो ?

आरती : मेरे ऋतुरंजन, मैं महाप्रेतिनी हूँ। मुझे छुओगे तो भस्म हो जाओगे। मुझसे दूर रहो। तुमने अभी कहा न, ये भूत-प्रेत सच हैं।

ऋतु : (पकड़ लेता है।) अरु।

आरती : मैं भी पक्षी हूं—छोड़ दो मुझे—मैं भी आकाश में उड़ूंगी।

ऋतु : मुझे क्षमा करो अरु। सच केवल तुम हो—ये भूत-प्रेत, यह मृत्यु दर्शन, यह भयनीति सब झूठ है।

आरती : हमारे नगर में नया ऋतु आया है; वही है हमारा रंजन। इस ऋतु में प्रकाश है, जल है।

ऋतु : तुम्हीं उस नये ऋतु की आरती हो।

आरती : मेरे ऋतु रंजन···!

ऋतु : [घुटने के बल बिलकुल सामने बैठा हुआ।]

मां की कही हुई सारी महान कहानियों के बीच में केवल तुम्हें देखता था—। हमारा प्यार इस नगर को शापमुक्त करेगा।

आरती : (उठ जाती है।) नहीं, हम उल्टे उसी अभिशाप के अंग बन जायेंगे।

ऋतु : (सोचता हुआ उठता है।) तुम ठीक कहती हो।

आरती : (पास खिचती है।) नहीं, नहीं, मेरे कहने का अर्थ उल्टा होता है।—हम सब यहाँ अपने-आपके विरोधी हैं।

ऋतु : विरोधी ?

आरती : मेरे विरोध।

(ऋतु के अंक से अरु लग गई है। तभी दौड़ी हुई जाया आती है।)

जाया : नहीं नहीं—यह असंभव है—यह असंभव है। मैं अभी यह अपनी आँखों से देखकर भागी आ रही हूँ कि अवधूत तुम दोनों को बाँधकर उसी अंधगहवर में खींचे लिये जा रहा है।

ऋतु : माँ।

जाया : मैं मर जाऊँगी, पर यह नहीं होने दूंगी।

ऋतु : माँ, हम इसलिए निर्वासित थे ?

जाया : मैं तभी इस नगर में आने से डरती थी।

आरती : पर हम इसीलिये जन्मे थे।

जाया : अवधूत की दृष्टि तुम दोनों पर है।

ऋतु : इसी शक्ति से हम अवधूत को नगर से बाहर करेंगे।

जाया : (आग्नेय दृष्टि से देखती है।) ओह, तुम दोनों ने निश्चय कर लिया है। पर जिसे तुम प्रेम कहते हो, वह यहाँ कब से शापित है।

ऋतु : हम उस श्राप को ही पवित्र करेंगे।

आरती : हम वह नया फिर से आरम्भ करेंगे।

जाया : (उत्तप्त स्वर में) इस नगर के अजन्मे संतान, सुनो। ये दोनों प्रेत-शापित हैं।—इनका प्रणय अभिशप्त है। मैं नहीं चाहती ये तुम्हारे जन्म के असमय कारण बनें—सुनो—सुनो

—[कुछ कहना चाहती है, पर जैसे किसी ने उसका गला पकड़ लिया है।

वह लड़खड़ाने लगती है। अजन्मे संतानों के स्वर से सारा वातावरण संत्रस्त हो उठता है। जाया की हिचकियाँ फूट रही हैं। ऋतु आरती उसे सम्भालते हैं, जाया मरकर जमीन पर गिरती है। करुण-सन्नाटा खिंच जाता है।]

ऋतु : (शव को छूकर) ओ अजन्मे संतान, अब मुझे अनुभव हुआ, तुम हमसे बदला लेने के लिए यहाँ जन्म लेना चाहते हो।

आरती : पर उन्हें जन्म देने वाले केवल हम ही थे।

ऋतु : ऐसे हत्यारों को जन्म देकर क्या होगा।

आरती : वे हत्यारे नहीं हैं, हत्यारे हम हैं। हम हर नये रास्ते को रोके हुए हैं।

[आरती जाने लगती है।]

ऋतु : कहाँ जा रही हो ?

आरती : [आरती का संत्रस्त मुख सहसा गीला हो जाता है।]

ऋतु : अब हम स्वतन्त्र हैं।

आरती : अब हम गुलाम हैं।

ऋतु : अरु।

आरती : पर मैं गुलामी को तोड़ने की कोशिश करूंगा। मेरे पास केवल एक जीवन है, वह जितना ही स्वतन्त्र है, उतना ही गुलाम है, उसमें जितना ही प्यार है, उतना ही उसमें विद्रोह है।

ऋतु : सुनो अरु।

आरती : मुझे महाप्रेतिनी बनानेवाला, विश्वास करनेवाला यह नगर मेरा है। यहाँ कुछ भी अभिशप्त नहीं है—पर मुझे इस अस्मिता की परीक्षा देनी होगी। वह केवल कहने में नहीं होगा।—नहीं होगा।

[तेजी से चली जाती है।]

●

दूसरा दृश्य

स्थान : मीथू का जंगल।

समय : रात।

[दोनों स्त्रियाँ बैठी हुई लाल चुनरी में पीला गोटा लगा रही हैं। दोनों गा रही हैं।]

हरे आम कै पलउआ है देवी
सूर्या गऊ कै दुधार
हरे पलास कीलकड़िया हे देवी
करीलै अहुतिया तोहार
करी लै अहुतिया तोहार—
हे देवी, करी ले—।

[आरती दुल्हन का वस्त्र पहने आती है। मूर्तिवत खड़ी होती है। स्त्रियाँ गा रही हैं।]

आरती : जल्दी करो, मेरे पास समय नहीं है।

पहली स्त्री : बस, बस हो गया।

दूसरी स्त्री : देखो न, कितनी जल्दी है इन्हें।

आरती : कोई और यहां आ जायेगा तो मुझे जलने भी न देगा।

पहली स्त्री : चिता तैयार है माँ, चुनरी भी बस तैयार ही है।

[फिर गीत; गोटा लगा रही हैं।]

लाल रंग चुनरी सबुज रंग गोटवा
धनि रूप देवी तोहार
डोलिया पर चढ़ लीं देवी भवानी
चल दीं नगरिया के पार
करीलैं अहुतिया तोहार—
हे देवी, करी लैं—।

[आरती लड़खड़ाकर गिर पड़ती है। दोनों स्त्रियाँ डरी हुई दूर खड़ी हैं।]

आरती : (उठती हुई) मुझे सहारा दो। उठाओ मुझे। मैं तुमसे प्यार करती हूँ। और इसी प्यार की चिता पर चढ़ने जा रही हूँ। उठाओ मुझे—इतना डरती हो। तुम्हे इसी डर से मुक्त करने के लिये ही तो मैं उठ रही हूँ। लाल

रंग चुनरी सबुज रंग गोटवा—।

[धीरे-धीरे उठ खड़ी होती है। स्त्रियाँ चुनरी थामे खड़ी हैं।]

आरती : मुझे चुनरी ओढ़ा दो। अब समय हो गया। मोथू के जंगल में वही चाँद उगने को है—। जल्दी करो—।

[दोनों स्त्रियाँ दूर से ही चुनरी ओढ़ा देती हैं। आरती बायीं ओर जाने लगती है। स्त्रियाँ पीछे-पीछे चलकर रुक जाती हैं। आरती चली जाती है।]

पहली स्त्री : देवी आकाश की ओर देख रही हैं।

दूसरी स्त्री : वही उगता हुआ चन्द्रमा।

पहली स्त्री : देवी रो रही हैं क्या ?

दूसरी स्त्री : वह महामायावनी है।

पहली स्त्री : हाय, यह क्या हो गया।

[दोनों स्त्रियाँ इधर भागती हैं। आरती दौड़ी हुई आती है।]

आरती : बचाओ—बचाओ मुझे। मैं महा-प्रेतिनी नहीं हूँ। मुझ पर दया करो—दया करो।

[दोनों स्त्रियों के चरणों पर गिरती है। स्त्रियाँ दूर हटती हैं।]

पहली स्त्री : हमारे भाग ही ऐसे हैं।

दूसरी स्त्री : इस नगर से भूत-प्रेत नहीं जायेंगे। यह नगर अभिशप्त रहेगा।

आरती : मेरे जलजा ने से यह नगर भूत-प्रेतों से मुक्त हो जायगा ?

पहली स्त्री : हाँ, निश्चय।

दूसरी स्त्री : अवश्य···।

आरती : और अगर नहीं हुआ तो ?

[दोनों स्त्रियाँ चुप हैं।]

आरती : फिर तुम्हें विश्वास हो जायेगा न, कि मनुष्य भूत-प्रेत नहीं होता—बोलो —बताओ।

[दोनों स्त्रियाँ चुप हैं। आरती तेजी से बढ़ती है, और बायीं ओर अदृश्य होकर आग लगा देती है। आग की लपटों को स्त्रियाँ देख रही हैं।]

पहली स्त्री : (प्रसन्नता से) नगर से भूतप्रेत उड़ना शुरू हो गये।

दूसरी स्त्री : वे उड़ रहे हैं।—वे आ रहे हैं।

पहली स्त्री : आगे-आगे मीथू जंगल में जलती हुई महाप्रेतिनी माँ जा रही हैं, उनके पीछे सारे भूत, सारी प्रेतात्मायें

जा रही हैं—।

[पृष्ठभूमि में नगरवासियों के आने का शोर।]

दूसरी स्त्री : वे सब भागे आ रहे हैं।

पहली स्त्री : उनका रास्ता छोड़कर; किनारे खड़ी हो जाओ।

[दोनों स्त्रियाँ एक किनारे खड़ी हो जाती हैं। ऋतु के साथ नगर के लोग आते हैं।]

ऋतु : कहां हैं अरु।—कहाँ हैं—?

['कहाँ हैं', सारे लोगों के मुंह से निकलता है। लोग ढूंढ़ रहे हैं। सहसा दोनों स्त्रियाँ बढ़ती हैं।]

पहली स्त्री : है—सावधान। शोर नहीं।

दूसरी स्त्री : माँ ने महाचिता जलाई है।

पहल स्त्री : वह देखो।

[ऋतु बायीं ओर बढ़ता है और चीख-कर वहीं बैठ जाता है। लोग एक क्षण के लिए उस दृश्य को देखकर मूर्तिवत रह जाते हैं।]

वृद्ध : यह क्या कर डाला ?

पहली स्त्री : हमारा नगर प्रेत-मुक्त हो गया।

तीसरा : अपराधिनी, तूने आरती की हत्या कर दी।

दूसरी स्त्री : सारा अभिशाप अपने संग लिये हुए माँ इसी जंगल के बीच से चली गयीं।

पहली स्त्री : जैसे यहाँ कभी वह बाँसुरी बजाने वाला जादूगर आया था, आगे-आगे वह बाँसुरी बजाता जा रहा था, उसके पीछे-पीछे इस नगर के सारे चहे चले गये थे। उसी तरह माँ आगे-आगे—।

तीसरा पुरुष : पर एक भी चूहा नहीं गया था।

वृद्ध : जैसे इस नगर का एक प्रेत भी न गया।

[पुरोहित आता है।]

पुरोहित : पकड़ लो इन्हें। और उसी आग में डाल दो।

[पहला और दूसरा पुरुष बढ़कर उन्हें पकड़ लेते हैं।]

पुरोहित : खींचकर ले जाओ उसी आग में।

[ऋतु रोक देता है।]

ऋतु : नहीं—ये निर्दोश हैं। मूल अपराधी वह है, जो प्रेत-विश्वास को जन्म देता है। जो संशय को संकल्प में, शंका को नियम में और विद्रोह को स्वीकार में बदलने का प्रयत्न करता है। अकाल हर अगले दिन आता है, जब वह दिन विवेकहीन होता है। जब वह दिन हमारा नहीं, किसी और का होकर उगता है।

पुरोहित : हर दिन देवता का होता है।

ऋतु : यहीं से अकाल शुरू होता है।

पुरोहित : आरती की मृत्यु का दोष कहीं तुम्हारे माथे पर भी है।

ऋतु : स्वीकार है मुझे (रुककर) इस नगर के पतन में, अवधूत के यहाँ आने में, तुम्हारी बेटी के पागल हो जाने में, नगर में इस नये राजतन्त्र के उग आने में—चारों ओर कहीं मेरा भी दोष है। मैं स्वीकार करता हूँ।

पुरोहित : मैंने बहुत दिन पहले बताया था कि नगर में एक दिन ऐसा समय आयेगा।

ऋतु : और उसी समय यह भी बताया

होगा कि यहाँ कलंकी अवतार होगा। वह बहुत ही बलवान, बुद्धिवान और पराक्रमी होगा। वह अपनी अपराजेय सेना से सब को मुक्त करेगा। वही सबको पतन से बचायेगा। वह विरोधियों का सर्वनाश कर सतयुग का प्रवर्तक होगा। फिर वही चक्रवर्ती राजा होगा, और वह सम्पूर्ण जगत को फिर से आनन्द देगा।

पुरोहित : यही सच है।

ऋतु : वह सच नहीं है, जो पहले से ही जान लिया जाता है।

पुरोहित : सच क्या है, इसे तुम नहीं जान सकते।

पहला पुरुष : आओ हम इस पर शोक मनाये।

वृद्ध : (हंसता है, सोचकर) हां, और उपाय ही क्या है।

(अब दोनों हंसने लगते हैं—धीरे-धीरे वह हंसी प्रेत की तरह बढ़ती है।]

पुरोहित : (त्रस्त) बंद करो यह हंसी। अवधूत की वह हंसी अब तक मेरे कानों में विषदंश कर रही है। मैं अपनी

पागल बेटी को लेकर उसके पास गया। वह बोला, इसके तो पंख जम आये हैं, इसे आकाश में उड़ना ही होगा। मैंने कहा, 'मुझे देखकर बातें करो। तुम्हें पता है, मैं कौन हूँ?' वह बोला, 'मैं तुम्हारी कल्पना हूं, पर रचना इस पूरे नगर की हूँ—पिछली कई शताब्दियों के इतिहास की दृष्टि हूं मैं।' मुझे बहुत क्रोध आया। मैंने कहा—'मैं तुझे इस नगर से निकाल दूंगा।' फिर यह अवधूत चुप होकर अपलक मुझे निहारने लगा और मैं उसके मुँह की तरफ खिचने लगा। मैं चिल्ला पड़ा—फिर वह अट्टहास कर हंस पड़ा।

[ऋतु बायीं ओर बढ़कर उस शेष आग की तरफ देखता है। बैठकर धरती को माथे से छूता है। ऐसा सभी करते हैं। पर दोनों स्त्रियां खड़ी रो रही हैं। और पुरोहित मूर्तिवत खड़ा है।]

●

तीसरा दृश्य

स्थान : नगर का चौक।
समय : प्रातः काल

[नगर के वही लोग उपस्थित हैं। दोनों स्त्रियां भी हैं।]

पहला पुरुष : हम रात भर एक क्षण के लिये भी नहीं सो पाते।

दूसरा पुरुष : रात भर ऐसी भयानक हवा बहती रही; जिसमें हमारी मृत संतानों की चीख मिली थी।

वृद्ध : चीख नहीं प्रश्न,—वही प्रश्न, जिससे हम भागते रहे हैं।

पहली स्त्री : आरती, लाल चुनरी ओढ़े पूरे नगर में घूमती रही।

दूसरी स्त्री : हम उससे क्षमा मांगने उसके पास जाते थे, वह दुल्हन की तरह लजा कर दूर हट जाती थी।

पहली स्त्री : रास्ते में हमें धवल वस्त्र पहने जाया माँ भी मिलती थीं। वह चारों ओर कुछ ढूंढ़ रही थीं।

दूसरी स्त्री : वह हमें देखकर हंस पड़ती थी।

[दोनों स्त्रियां रोने लगती हैं।]

चौथा पुरुष : किसी की हंसी से मेरे घर की दीवारें काँपती थीं।

पहला पुरुष : मेरे घर-आंगन में जीवित सर्पों की वर्षा हुई है।

दूसरा पुरुष : मेरे घर-आंगन में हड्डियों की।

[पुरोहित आता है।]

कई लोग : महाराज! हमारी रक्षा करो।

पुरोहित : (चुप है।)

तीसरा पुरुष : पुरोहित, तुम इस तरह चुप क्यों हो?

पुरोहित : मेरी बेटी, ठीक आधी रात के समय घर की छत से कूद पड़ी। नीचे गिरती हुई चिल्लायी—मैं अपने गगन में उड़ रही हूँ।

वृद्ध : गगन में।

पुरोहित : मैं दौड़ा हुआ उसकी लाश के पास आया। देखता हूँ, वहाँ फैला हुआ रक्त जमा है और मेरी बेटी की लाश वहाँ नहीं है। चारों ओर

ढूंढने लगा—सहसा देखा, अवधूत उसे अपने संग लिये चला जा रहा था। मैं दौड़ा, उसी समय वह भयानक हवा चलने लगी।

[इसी बीच ऋतु आता है। चुप खड़ा रह गया है।]

पहला पुरुष : उस आँधी में मृत संतानों की बंदी आत्मायें हंसती-रोती रहीं।

ऋतु : हम इस तरह कब तक रोयेंगे? हमारे इसी चरित्र ने निर्णय का सारा अधिकार उसे दिया है, जिसे कोई निर्णय नहीं लेने आता। वह सब कुछ सिद्धान्ततः स्वीकार कर लेता है, और हमें केवल शिकायत करने के लिये छोड़ देता है। इसी शून्य में से वह आंधी उठती है, जिसमें जल नहीं बरसता।

वृद्ध : कितने दिन बीत गये जल नहीं बरसा।

तीसरा : कितने दिन हो गये, हमने कुछ नहीं किया।

चौथा : हमें सब कुछ सहने की आदत हो गयी।

पहली स्त्री : पुरोहित!

पुरोहित : ऋतु!

ऋतु : जो हमारे विवेक को मारकर चारों ओर अकाल उगाता है, मृत्यु और लाश के राज्य में हम उसे बिलकुल अकेला छोड़ दें।

वृद्ध : जाया!

पहली स्त्री : आरती!

पुरोहित : मेरी बेटी!

तीसरा पुरुष : हमारी मृत संतान—!

ऋतु : ये सब विवेक की वेदी पर खड़े हमारी प्रतीक्षा कर रहे हैं।

पुरोहित : हम अवधूत को अपने नगर से निकालेंगे।

['हम उसे निकालेंगे', सबका सम्मिलित स्वर।]

ऋतु : पर कैसे? कल्पना करो, मैं ही वह अवधूत हूं, और तुम सब मुझे निकालना चाहते हो, चलो निकालो, कैसे निकालते हो?

पहला : मारकर। खींचकर—धक्का देकर।

दूसरा : नहीं तो हत्या करके।

पुरोहित : मैं अपने उस शास्त्र को उसके

सामने जला दूंगा, जिसमें कलंकी अवतार है।

ऋतु : पर जिसने उस शास्त्र की रचना कराई है, जिसकी इच्छा से अवधूत इस नगर में आया है, वह राजतन्त्र उसकी रक्षा करेगा।

पहला . राजतन्त्र।—नया राजा ?

दूसरा : कितने दिन हो गये, हमने राजा को नहीं देखा।

वृद्ध : अब राजा एक नहीं है, वह अब, असंख्य अधिकारियों और नौकरों में बंट गया है।

चौथा : पर हमने अपना एक राजा चुना था।

वृद्ध : फिर तो हर चुननेवाला राजा का वही अंश हुआ। इस तरह राजतन्त्र जितना ही मूर्त है, उतना ही वह अमूर्त भी है।

तीसरा . यह पुरोहित क्या है ?

पुरोहित : मैं अब उसका विरोधी हूं।

तीसरा : हाँ हाँ, विरोध भी उसी तन्त्र का ही एक अंग है। इसमें राजतन्त्र शक्तिशाली बना रहता है।

ऋतु : (सहसा) बंद करो ये बातें।

वृद्ध : राजतन्त्र सब कुछ स्वीकार कर लेता है—मेरे जीवन भर का यही एक अनुभव है।

तीसरा : वही स्वीकृति हमारे गले में लटक जाती है।

ऋतु : उसने हमें बातें करने का अधिकार देकर कुछ ऐसा बनाया है कि हम अपने तमाम विरोधों के बावजूद उसी के संग हैं।

[सब चुप खड़े रह जाते हैं।]

●

चौथा दृश्य

स्थान : अवधूत का मन्दिर।
समय : पिछले दृश्य के बाद ही।

[सारे लोग आये खड़े हैं। सबके हाथों में अस्त्र हैं, सब उत्तेजित हैं।]

पुरोहित : विश्वासघाती अवधूत ! बाहर निकल !

तीसरा : विश्वासघाती !

वृद्ध : तुम दोनों के बीच कोई विश्वास था क्या ?

पुरोहित : मेरा मतलब—मेरा मतलब—मेरा अभिप्राय—।

ऋतु : स्वीकार करो पुरोहित ! उस दिन हम सबने स्वीकार किया था।

[एक सन्नाटा खिंचता है।]

सब : बोलो—बोलो पुरोहित।

ऋतु : समय नहीं है अब।

पुरोहित : हाँ, हम दोनों में यह परस्पर

विश्वास था—हमारे पक्ष में रहने का—हमारे समस्त हितों की रक्षा का।

['मारो', 'मारो', 'इसे मारो' कहते हुए सब पुरोहित पर टूटते हैं। ऋतु सबको रोकता है।]

ऋतु : नहीं—नहीं—नहीं। उस विश्वास के अपराध में हम सब फँसे हैं। हत्या इसका विकल्प नहीं है। (सहसा) पुकारो अवधूत को। उस बंद दरवाज़े पर दस्तक दो।

[पहला तेज़ी से जाता है, मन्दिर-द्वार पर दस्तक देता है।]

ऋतु : ज़ोर से।—और ज़ोर—तोड़ दो दरवाज़ा।

[दूसरा, तीसरा, चौथा पुरुष भी दौड़ते हैं, धक्के से दरवाज़ा तोड़ देते हैं।]

ऋतु : अन्दर आओ—देखो अवधूत कहाँ है ?

पहला : देखता हूँ।

[वह अकेला अन्दर जाता है। दूसरा, तीसरा और चौथा सीढ़ियों पर खड़े हैं।]

वृद्ध : आज हमारी मृत संतानों की आत्माएँ मक्खी-चींटी नहीं बन रही हैं।

दूसरा : वे हम पर आक्रमण नहीं कर रही हैं।

तीसरा : जैसे अवधूत अब अकेला हो गया है।

[पहला तेजी से निकलकर नीचे दौड़ता है। सब उसे घेर लेते हैं।]

पहला : अवधूत सो रहा है।

ऋतु : सो रहा है? (कृपाण निकालता है।) यही समय है नगर को उससे मुक्त करने का।

[ऋतु सीढ़ियों पर तेजी से बढ़ता है। अन्दर जाता है। लोग मूर्तिवत उसी दिशा में देख रहे हैं।]

पहला : (धीरे से) भीतर से कोई आवाज़ आ रही है।

दूसरा : अच्छा है, अवधूत सोता रहे।

तीसरा : वह आज पहली बार सोया है।

वृद्ध : हो सकता है, इसमें भी कोई माया हो।

[ऋतु तेजी से निकलता है।]

ऋतु : कृपाण की धार उसके शरीर को छू तक न सकी। मैंने उस पर कई प्रहार किये, पर मेरा हाथ शून्य में ही टंग जाता रहा। फिर वह जगा, और मुझे देखकर वह मुस्कराने लगा।

पुरोहित : उसका गला क्यों नहीं दबोच दिया?

ऋतु : मेरे हाथ अब तक काँप रहे हैं।

वृद्ध : वह आ रहा है अवधूत!

[अवधूत खाली हाथ प्रकट होता है। 'मारो' 'इसे मारो' का शोर। अवधूत के हाथ उठाते ही सब शान्त हो जाते हैं।]

अवधूत : कितने दिनों बाद आज मुझे नींद आयी थी। लाशों के बीच सो जाना कितना शीतल है। कितना निश्चिन्त—निरापद। वे तुम्हारी तरह विश्वासघात नहीं करते। तुम लोग मुझे इस नगर से निकालने आये हो। तुम सबको देखकर मेरी इच्छा थूकने की होती है। मेरे मुख का स्वाद अजीब हो रहा है—रक्त, पीप, मल, मृत्यु, बुखार

—सबका स्वाद मिला है। मैं सोचता था, जहाँ इतना बड़ा अकाल पड़ेगा, जहाँ इतना पतन टूटेगा, वहाँ लोग अपने अस्तित्व के लिये युद्ध करेंगे, सत्ता को चुनौती देंगे और विद्रोह करेंगे। पर यहाँ ऐसा कुछ भी न घटा, जो मेरे लिये स्मरणीय होगा। मेरे मुँह का स्वाद और भयानक हो रहा है।

पहली स्त्री : वह स्वाद विष का हो जाय।

दूसरी स्त्री : तेरे बदन में जीते नरक के कीड़े पड़ें।

वृद्ध : तू हमारे नगर को छोड़कर चला जा।

पहला : रात भर नगर में जो घटा है, वह असह्य है।

अवधूत : बस।

दूसरा : रात भर सारा नगर जगा बैठा रहा। लोग इस समय दिन को सो रहे हैं।

अवधूत : अब यही क्रम जारी रहेगा। लोग रात भर जागेंगे, दिन भर सोयेंगे।

पुरोहित : सावधान, यह हमें श्राप दे रहा है।

अवधूत : मैं श्राप नहीं देता, स्थिति बताता हूँ। यह नगर मेरी साधना भूमि है। इसे तुम सबने मेरे योग्य बनाया है। जब तक लाशों की और मृत संतानों की आत्माओं की वह महा-संख्या पूरी न हो जाय, मैं इस नगरी को नहीं छोड़ूँगा।

[स्त्रियाँ पत्थर फेंककर मारती हैं। कुछ लोग सीढ़ियों पर बढ़ते हैं।]

ऋतु : हम सब तुझे अपने नगर से बाहर निकाल कर ही रहेंगे।

तीसरा : हम सब मिलकर तेरी हत्या करेंगे।

अवधूत : काश! कोई मेरी हत्या कर देता। कलंकी अवतार की अनिवार्यता कोई ले लेता। मैं चाहता हूँ, कोई आये इन बंदी आत्माओं के द्वार खोल दे। इस अभिशप्त नगर में कल सुबह होने से पहले, यहाँ की सड़ती हुई अस्थियों को, कोई सूरज के ऊँचे कगार से नीचे फेंक दे—उसे गहरे जल में जहाँ से रोशनी उगती है। (रुककर) पर यह सब यहाँ नहीं होगा। कोई इस मर्म-

द्वार को खोलने को नहीं आयेगा। अस्थियों को कंधे पर लादे हुए सूरज के उस ऊँचे कगार तक कोई नहीं पहुँच पायेगा।

पुरोहित : ऋतु, इस महदैत्य के विषाक्त मुख पर कृपाण फेंककर मारो। यह अपनी बातों से हमें निर्बल बना रहा है।

अवधूत : (सहसा) खोल दूं बंदी आत्माओं के द्वार ?

कुछ लोग : नहीं, नहीं, नहीं।

अवधूत : कौन निर्बल है ? तुम सब या तुम्हारी मृत संतानों की आत्माएँ ? या वे अजन्मी आत्माएँ जो यहाँ जन्म पाने की प्रतीक्षा में खड़ी हैं ? (रुक जाता है।) डरो नहीं, वे आत्माएँ सो गई हैं। वे अजन्मी आत्माएँ भी तुमसे उदास हो चली हैं।

ऋतु : (तेज़ी से सीढ़ी पर चढ़ता है, पर मूर्तिवत रुककर) जन्मी-अजन्मी दोनों आत्माएं मेरे ही बिम्ब हैं, अवधूत ! तू हमारा प्रत्यक्ष शत्रु है, पर दिखाया है तूनेही हमें उन आत्माओं

से हमारे जीवन-मृत्यु का सत्य। इस क्षण मुझे लग रहा है मैं ही अपना संवाद हूँ ?

अवधूत : नहीं, नहीं, विवेक से मैं डरता हूँ, वही है मेरा शत्रु, मुझे निर्बल मत बनाओ।

['मारो' 'मारो' कहते हुए लोग बढ़ते हैं। अवधूत को नीचे खींच लाया गया है। लोग उस पर क्रोध से प्रहार कर रहे हैं, पर वह अविचल खड़ा है।]

अवधूत : तुम सब मेरा कुछ नहीं कर सकते। न मैं व्यक्ति हूँ, न तुम्हारी तरह मनुष्य हूँ।

पहली स्त्री : क्या हो तुम ?

दूसरी स्त्री : तुम जो कुछ भी हो, यहाँ से चले जाओ।

पुरोहित तुम अब यहाँ नहीं रह सकते।

अवधूत : पर मैं कहाँ जाऊँ ?

वृद्ध : जहाँ से तुम आये थे।

अवधूत : मैं कहीं बाहर से नहीं आया। तुम्हीं सब में से जन्मा हूँ।

पुरोहित : झूठ बोलता है।

पहला : मायावी है।

दूसरा : हम पर अपना झूठा मन्त्र चला रहा है।

तीसरा : इसकी आँखों में आँसू हैं।

[अवधूत बढ़कर चबूतरे पर घुटनेके बल बैठता है।]

अवधूत : बैठ जाओ।

[पुरोहित के अलावा सब बैठते हैं।]

अवधूत : मुझे जन्म देने वाला वही राजतन्त्र है, जिसे जन्म देनेवाले तुम सब हो। (रुककर) आओ मारो मुझे—मुझे इस नगर से निकाल दो। मारो मुझे।

[सब लोग चुप बैठे हैं।]

अवधूत : पहचानो मैं तुम्हारा ही मन हूँ। नगर की आजादी के बाद तुम कुछ असंभव आश्चर्यजनक चाहते थे। असंभव, आश्चर्यजनक। तुम्हारा यह चाहना सहज था। तभी मुझे तुम्हारे लिये कलंकी की वह असंभव आश्चर्य ढूँढ़ना पड़ा। मैं बेहद थक गया हूँ—अब बोला नहीं जाता।

[लुढ़क जाता है। सारे लोग उसके चारों ओर घिर आये हैं।]

ऋतु : सुनो—सुनो अवधूत। हम यह मर्म-द्वार खोलेंगे, मृत-अमृत संतानों को हम सूरज के कगार से पवित्र फूल की तरह उस काल महासागर में डाल आयेंगे। जहाँ से रोज सूरज निकलता है। हम यहाँ रहें या न रहें पर कोई विद्रोही प्रिया, जब इस नगर में प्रेम शिशु को जन्म देगी तब वही इसे शाप मुक्त करेगा।

[अवधूत उठता है।]

अवधूत : पुरोहित, मेरे पास आओ। डरो नहीं। मैं न किसी का विश्वास करता हूँ, न किसी का घात करता हूँ। मैं सबका अपराध लेता हूँ। (स्वयं बढ़ता है।) पुरोहित। रुको।

पुरोहित : (भागता हुआ) हत्यारा—विश्वास-घाती—अधर्मी।

अवधूत : इतनी घृणा मत करो—तुम्हीं ने मुझे जन्म दिया है।

पुरोहित : मारो—मारो इसे।

[भाग जाता है।)

अवधूत : क्योंकि तू मुझे नहीं मार सकता।

ऋतु : पुरोहित भाग गया।

अवधूत : वह नये राजा से यह कहने गया कि उसने अवधूत को नगर से निकाल दिया। (घूमता है।) में इस नगर से नहीं जाऊँगा। यह मेरी साधना भूमि है।

ऋतु : यह भूमि हमारी है। इसे छोड़कर तुम्हें जाना ही होगा।

अवधूत : जहाँ इस तरह का राजतन्त्र होगा, वहाँ अकाल पड़ेगा, भूतप्रेतों से वहाँ के लोग अभिशप्त होंगे। वहाँ असंतोष हो सकता है, पर विद्रोह नहीं हो सकता : ऐसी ही भूमि मेरी होगी।

[लोग अवधूत पर टूट पड़ते हैं। उसे मारते हैं। वह चबूतरे पर अविचल खड़ा है। लोग थककर गिर जाते हैं। 'मारो' 'मारो' के उभरते और मरते हुए स्वर से वातावरण भर गया है।]

वृद्ध : मैं इसे मारता हूं, पर वह चोट उल्टे मुझे ही लगती है।

पहला : मेरी जाँघ तो जैसे टूटी जा रही है।

दूसरा : मेरे सारे बदन में चोट है।

ऋतु : हम चाहे यहीं टूटकर मर जायं पर इसे यहाँ से निकालना ही होगा।

अवधूत : मारते-मारते तुम सब लोग मर जाओगे, पर मैं यहाँ फिर भी रहूँगा। जब तक यह राजतन्त्र रहेगा, तब तक यह अकाल रहेगा, तब तक यह नगरी भूतप्रेतों से अभिशप्त रहेगी। तब तक मैं यहाँ रहूँगा। सुनों मैं फिर कहता हूँ—मैं फिर कहता हूँ—

[यह कहता हुआ अवधूत सीढ़ियों पर चढ़ता जा रहा है। अब वह ऊपर जा खड़ा है।]

ऋतु : अवधूत। हम तुझे कभी नहीं भूलेंगे।

सब : (एक साथ) हम तुझे कभी नहीं भूलेंगे।

[अवधूत अन्दर मे अपना कपालदंड लिये हुए ऊपर से नीचे उसरता है। सब नत-सिर हैं। वह सबके बीच से होता हुआ चबूतरे पर जा खड़ा होता है।]

अवधूत : (हाथ उठाये हुए) जिस दिन मुझे भूलोगे, मैं उसी क्षण यहाँ प्रकट हो जाऊंगा। मैं जिस तरह अब भी जीवित हूं, उसी तरह तब भी जीवित रहूँगा (जाने लगता है।) जब ऐसा राजतन्त्र होगा, तब ऐसा अकाल पड़ेगा, तब यह भूमि अभिशप्त होगी। तब तक मैं जीवित रहूँगा।

[अदृश्य हो जाता है। पर उसके शब्द अब तक सुनाई दे रहे हैं। बैठे हुए मूक लोगों के हाथ उसकी विदा में उठे रह गये हैं। मन्दिर द्वार से गहन संगीत की जैसे आँधी उठती है। उसमें असंख्य संतानों के स्वर मिले हुए हैं।]

पटाक्षेप

परिशिष्ट

नाटक पर आधारित प्रश्न

(अ) नाट्यतत्त्व सम्बन्धी (कथा तत्त्व)

१. इस नाटक की कथा अपने शब्दों में लिखिये।
२. इस नाटक में पुराण की सहायता ली गई है—इस कथन को स्पष्ट कीजिये।
३. कलंकी क्या है ?
४. नाटक में भूत और वर्तमान में घटी घटनाओं का विवरण दीजिए।
५. नगर के लोग कलंकी की प्रतीक्षा क्यों करते हैं ?

चरित्र तत्त्व

१. ऋतु ही इस नाटक का नायक है; इस बात को समझाइए।
२. ऋतु और आरती के चरित्रों की तुलना कीजिए।
३. अवधूत कौन है, वह नगर में क्यों आया ?
४. जाया तथा नगरवासियों के सम्बन्ध को बताइये।
५. ऋतु ने नगर में क्या नई बात की ?

विषय-वस्तु सम्बन्धी

१. इस नाटक का उद्देश्य क्या है।
२. इस नाटक का सार अपने शब्दों में लिखिए।
३. इससे तुम्हें क्या दृष्टि मिलती है ?
४. नाटक के आधार पर नगर की दशा क्या थी ? और ऐसी क्यों थी ?

(ब) व्याकरण और रचना सम्बन्धी प्रश्न

१. यहाँ कलंकी अवतार होगा—इस वाक्य का पद परिचय कीजिए।
२. निम्नांकित वाक्यों का वाक्य-विश्लेषण करो।
   (क) उस समय मैं कहाँ थी ?
   (ख) मेरा जन्म आज हुआ है।

(ग) आरती कितनी बहादुर है।
(घ) यही तुम चाहते थे।

३. 'नर' और 'नम' लगाकर 'महत' श्रेष्ठ' 'सुन्दर' और 'मधुर' के उत्तरावस्था तथा उत्तमावस्था के रूप बनाओ और वाक्यों में उन्हें प्रयुक्त करो।

४. इन शब्दों पर व्याकरणगत टिप्पणियाँ लिखिए—भयभीत, संस्कार, आशंका, दूरगामी, उद्देश्य, अंधविश्वास, प्रेतमुक्ति।

५. निम्नलिखित वाक्यों की पूर्ति करो—
(क) इस नगर को किसने·····किया था ?
(ख) यहाँ आकर·····कितनी···हो गई !
(ग) मेरा जन्म·····हुआ·····।
(घ) मैं·····स्वप्नों·····देखती·····।
(ङ) यही तुम·····थे !

६. निम्नलिखित वाक्यों को शुद्ध करो—
(क) पूर्वजों ने प्रश्न की थी।
(ख) हम तुम्हारे शरण हैं।
(ग) तुझने कैसे मालूम इसका नाम।
(घ) तेरे तब जन्म नहीं हुआ था।
(ङ) मैंने इस नगर की महान कहानी सुनी हैं।

७. निम्नांकित शब्दयुग्मों का अर्थभेद समझाइये—
साधन और साधना, प्रासंगिक और अप्रासंगिक, विश्वास और अंधविश्वास, चर और गुप्तचर, दृश्य और अदृश्य, संशय और संकल्प, शंका और नियम, विद्रोह और स्वीकार, तन्त्र और राजतन्त्र।

८. निम्नलिखित शब्दों की व्याख्या करके उनके अर्थ स्पष्ट कीजिए।
रंजन, अवधूत, कलंकी, ऋतुरंजन, अभिशप्त, पृष्ठभूमि, मूर्तिवत, संवादप्रेतात्माएँ, मर्मद्वार, अनिवार्यता, महासंख्या, अजन्मी संतान, साधनाभूमि, अस्मिता, प्रेमशिशु, मायावी, मीथूजंगल।

● ● ●